ISSN : 0373-1200

अक्टूबर 2002 (विशेषांक)

सी. एस. आई. आर. तथा डी. बी. टी. नई दिल्ली के आंशिक अनुदान द्वारा प्रकाशित

मूल्य : 9.00 रु०

विज्ञान

अप्रैल 1915 से प्रकाशित हिन्दी की प्रथम विज्ञान पत्रिका

प्रोफेसर हीरालाल निगम सम्मान अंक

WL β1

WLα1 WLα2

विज्ञान परिषद् प्रयाग

लन्दन विश्वविद्यालय में उनके गुरु
सर रोनैल्ड एस. नाइहोम

प्रयाग विश्वविद्यालय में उनके गुरु
आचार्य नीलरत्न धर

प्रो0 हीरालाल निगम : जीवन–वृत्त

जन्म	:	1 अक्टूबर 1922
जन्म स्थान	:	देवराज नगर, सतना, म0 प्र0
पिता श्री	:	श्री बद्री प्रसाद निगम (स्व0)
माता श्री	:	श्रीमती जानकी देवी निगम (स्व0)
प्रारम्भिक शिक्षा	:	देवराज नगर में तथा रीवा (दरबार कालेज में)
उच्च शिक्षा	:	इलाहाबाद विश्वविद्यालय, बी.एससी. (1942), एम.एससी. अकार्दनिक रसायन (1944)
शोध	:	• डी.फिल. (1949) इलाहाबाद विश्वविद्यालय, निदेशक प्रो0 नीलरत्न धर • पीएच.डी. (1958) लंदन विश्वविद्यालय निदेशक सर रोनैल्ड एस0 नाइहोम
शिक्षण कार्य	:	रसायन विज्ञान विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय (अगस्त 1947 से सितम्बर 1982)
कुलपति	:	अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (दिसम्बर 1982 से फरवरी 1988)
अध्यक्ष	:	EPCO (ग्रामीण), मध्य प्रदेश (1983–1987)
सम्प्रति	:	सदस्य कार्य–परिषद, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

अकादमिक सम्मान :

- अध्यक्ष, रसायन प्रभाग, भारतीय विज्ञान कांग्रेस (1980)
- अध्यक्ष, भौतिकीय विज्ञान प्रभाग, राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, भारत (1982)
- फेलो, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (INSA), नई दिल्ली (1977 से)
- कौंसिल सदस्य, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (INSA), (1979–83)
- फेलो, राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, भारत (1952 से)
- कौंसिल सदस्य, राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, भारत (1976–1984)
- सदस्य, उ0प्र0 राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (1972–1978)
- संस्थापक संपादक, नेशनल एकेडेमी साइन्स लेटर्स, इलाहाबाद (1978–83)

- मानद संपादक, जर्नल ऑफ इण्डियन केमिकल सोसाइटी (1981–89)
- कौंसिल सदस्य, इण्डियन केमिकल सोसाइटी (1981–अब तक)
- अध्यक्ष, इण्डियन केमिकल सोसाइटी (1990–1991)
- प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग (1966–69)
- संपादक, 'विज्ञान' विज्ञान परिषद् प्रयाग (1950–56)

इण्टरनेशनल कोऑर्डिनेशन केमिस्ट्री कांफ्रेंस (ICCC)

- **भाग लिया** : लंदन (1959), स्टॉकहोम (1962), हैम्बुर्ग (1966), रोम (1967), टुलूज (1980), कोलैरेडो (1984)
- **शोधपत्र पढ़ा एवं अध्यक्षता की** : टोरोण्टो (1972), डब्लिन (1974), प्राग (1978), एथेन्स (1986)
- **सत्र–व्याख्यान दिया** : नान्जिंग (1987)

अंतर्राष्ट्रीय सम्मान :

- वरेण्य अतिथि, पचासवीं मैंडलीफ कांग्रेस, बाकू (रूस 1981)
- इन्सा–रॉयल सोसाइटी एक्सचेंज फेलो, इंग्लैण्ड (1984)
- लंदन में रॉयल सोसाइटी के 150वें वर्ष में केमिस्ट्री कांफ्रेंस (1991) में आमंत्रित
- कॉमनवेल्थ विश्वविद्यालयों के कुलपति–सम्मेलनों में भाग लिया– बर्मिंघम (1983) तथा पेनांग (1986)

राष्ट्रीय पुरस्कार

- इण्डियन केमिकल सोसाइटी का आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रे स्मृति पदक (1987)
- इण्डियन केमिकल सोसाइटी का जे.सी. घोष स्मृति पदक (1988)
- इण्डियन केमिकल सोसाइटी का लाइफ–टाइम उपलब्धि पुरस्कार

अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार

आस्ट्रेलिया के न्यू साउथवेल्स विश्वविद्यालय हेतु लीवरहयूम विजिटिंग फेलोशिप (1969)

मानद उपाधि

- छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा डी.एससी. की मानद उपाधि (1998)

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली - 110004.
President's Secretariat,
Rashtrapati Bhavan,
New Delhi - 110004.

सं. 8-एम. एच. /2002 — 28 अगस्त, 2002

प्रिय डॉ. मिश्र जी,

भारत के राष्ट्रपति डॉ. आ. प. जै. अब्दुल कलाम जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि विज्ञान परिषद् प्रयाग से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका "विज्ञान" का आगामी अक्तूबर, 2002 अंक, देश के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो. हीरालाल निगम के अवदानों पर केन्द्रित एक विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है ।

राष्ट्रपति जी इस प्रकाशन की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करते हैं ।

भवदीय,

(राकेश शर्मा)

डॉ. शिवगोपाल मिश्र
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग,
इलाहाबाद - 211002,
उत्तर प्रदेश ।

विष्णुकान्त शास्त्री
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

राज भवन
लखनऊ–227132

संदेश
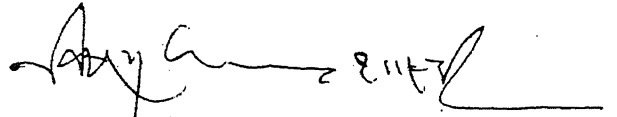
मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि विज्ञान परिषद प्रयाग द्वारा हिन्दी मासिक पत्रिका "विज्ञान" का माह अक्टूबर, २००२ अंक प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं विज्ञान पत्रिका के सम्पादक, प्रो० हीरालाल निगम के अवदानों पर केन्द्रित विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रो० हीरालाल निगम की गणना देश के शीर्ष रसायनशास्त्रियों में की जाती है। रसायन विज्ञान के सुयोग्य आचार्य के रूप में उनके विशिष्ट योगदान को कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। मुझे आशा है कि पत्रिका का यह विशेषांक जनसामान्य विशेषकर युवा वैज्ञानिकों में रसायन विज्ञान के प्रति अभिरूचि में श्रीवृद्धि करने तथा उनमें सृजनात्मक कौशल विकसित करने में सहायक होगा।

मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के इस विशेषांक की सफलता हेतु मेरी हार्दिक मंगलकामनाएँ।

(विष्णुकान्त शास्त्री)

केशरी नाथ त्रिपाठी

संख्या : /अ वि स/

विधान भवन
लखनऊ

दिनांक : 21 अगस्त 2002

शुभकामना

मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि विज्ञान परिषद् प्रयाग की पत्रिका का अक्टूबर 2002 अंक, भारत के सुख्यात वैज्ञानिक प्रो0 हीरालाल निगम के विज्ञान और देश को प्रदत्त अवदानों को केन्द्रित कर प्रकाशित किया जा रहा है।

भारतवर्ष का विज्ञान संसार का मार्ग प्रशस्त कर रहा है, कभी हम इस भूमि पर जगद्गुरु थे। आज भी हमारे वैज्ञानिक किसी से पीछे नहीं हैं। राष्ट्र ने वैज्ञानिकों का सम्मान किया है। प्रो0 डॉ0 ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का देश के सर्वोच्च पद राष्ट्रपति पद पर आसीन होना इसका प्रमाण है।

प्रो0 निगम इस देश के प्रमुख रसायन वैज्ञानिक हैं जो राष्ट्र की सर्वोच्च वैज्ञानिक संस्था इंडियन नेशनल साइंस अकादमी के फेलो हैं वे इण्डियन केमिकल सोसाइटी के राष्ट्रीय अध्यक्ष तथा इंडियन साइंस कांग्रेस के रसायन विभाग के सभापति रह चुके हैं। प्रयाग विश्वविद्यालय में प्रोफेसर तथा रीवा विश्वविद्यालय में कुलपति जैसे महत्वपूर्ण पदों पर रहकर उन्होंने न केवल शिक्षा की सेवा की है वरन रसायन विज्ञान को उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वे 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक तथा विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री भी रहे हैं।

मुझे विश्वास है कि प्रो0 निगम के व्यक्तित्व और कृतित्व को समर्पित 'विज्ञान' पत्रिका का यह अंश स्मरणीय और संग्रहणीय होगा।

मैं पत्रिका के सफल एवं सार्थक प्रकाशन हेतु अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ।

केशरी नाथ त्रिपाठी

डॉ0 शिवगोपाल मिश्र
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग
इलाहाबाद।

मायावती

मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश

लालबहादुर शास्त्री भवन
लखनऊ

सन्देश

दिनांक 31 अगस्त, 2002
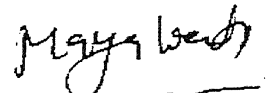
मुझे यह जानकर हर्ष है कि विज्ञान परिषद, प्रयाग की मासिक पत्रिका "विज्ञान" शीर्षस्थ वैज्ञानिक प्रो0 हीरालाल निगम की उपलब्धियों पर आधारित एक विशेषांक के रूप में प्रकाशित की जा रही है।

देश को आत्मनिर्भर बनाने तथा तकनीक के क्षेत्र में ख्याति दिलाने में वैज्ञानिकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत का विज्ञान आदिकाल से ही अपने चरमोत्कर्ष पर रहा है।

प्रो0 हीरा लाल निगम का योगदान विज्ञान के क्षेत्र में युवा वैज्ञानिकों के लिये मील का पत्थर है। उन्होंने अपनी मेहनत, कुशलता एवं दक्षता से देश का नाम राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया है।

मुझे विश्वास है कि हिन्दी की पहली विज्ञान पत्रिका में प्रो0 निगम द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में अर्जित की गई उपलब्धियों पर विहंगम दृष्टि डाली जायेगी और उनके कार्यों पर आधारित शोधपरक एवं रूचिकर सामग्री को प्रमुखता दी जायेगी।

पत्रिका के प्रकाशन के लिये मेरी हार्दिक शुभकमनाएं।

Mayawati

(मायावती)

डा० (श्रीमती) मंजु शर्मा
Dr. (Mrs.) Manju Sharma

सचिव
भारत सरकार
विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
बायोटेक्नोलॉजी विभाग
ब्लाक–2, 7 वां तल, सी०जी०ओ० कम्पलेक्स
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF SCIENCE & TECHNOLOGY
DEPARTMENT OF BIOTECHNOLOGY
Block-2 (7th Floor) CGO Complex
Lodi Road, New Delhi-110003

दिनांक: 2 सितम्बर, 2002

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकार अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि विज्ञान परिषद प्रयाग, इलाहाबाद ने अपनी मासिक पत्रिका "विज्ञान" के अक्तूबर, 2002 में छपने वाले अंक को देश के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो0 हीरालाल निगम के सम्मान में एक विशेषांक के रूप में प्रकाशित करने का निश्चय किया है। शिक्षा, विज्ञान तथा अनुसंधान के क्षेत्र में उनका योगदान भुलाया नहीं जा सकता है। उनका सम्पूर्ण जीवन देश और समाज की उन्नति के लिए समर्पित था।

2. इस विशेषांक के द्वारा उनके कार्यों तथा उनकी उपलब्धियों से प्रेरणा पाकर अनेक युवा-वैज्ञानिकों का भी मनोबल बढ़ेगा। मेरी हार्दिक शुभकामना है कि यह विशेषांक अपने इस उद्देश्य में सफल रहे।

मंजु शर्मा
(मंजु शर्मा)

डॉ0 शिवगोपाल मिश्र
विज्ञान परिषद प्रयाग
महार्षि दयानन्द मार्ग,
इलाहाबाद-211002

डॉ0 हीरालाल निगम सम्मान अंक

परम श्रद्धेय गुरुवर डॉ0 हीरालाल निगम जी विज्ञान परिषद् प्रयाग से पिछले 52 वर्षों से जुड़े रहे हैं। आपने 'विज्ञान' मासिक का 1950 से 1956 तक सम्पादन किया तथा 1966 से 1969 तक विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री पद को सुशोभित किया। आपके प्रशासनिक व लेखकीय अनुभवों ने इन वर्षों में परिषद् की गतिविधियों को नए आयाम दिए। इलाहाबाद से बाहर जाने के बाद भी आप निरंतर परिषद् के संपर्क में रहे और परिषद् में व्याख्यान दिए।

इस वर्ष डॉ0 निगम ने अपने जीवन के अस्सी वर्ष पूरे कर लिए हैं। इस शुभ अवसर पर परिषद् द्वारा 'विज्ञान' का यह विशेषांक डॉ0 निगम जी को समर्पित करते हुए हर्ष हो रहा है। देश के शीर्ष वैज्ञानिकों के लेखों तथा डॉ0 निगम के मित्रों, स्वजनों, शिष्यों तथा शुभेच्छुओं के संस्मरणों से युक्त यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है।

विज्ञान परिषद् परिवार द्वारा डॉ0 हीरालाल निगम जी के सक्रिय, स्वस्थ शतायु जीवन की मंगल कामना के साथ सादर !

शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग
तथा
सम्पादक 'विज्ञान'

विज्ञान

परिषद् की स्थापना : 10 मार्च 1913
विज्ञान का प्रकाशन : अप्रैल 1915
वर्ष : 88 अंक : 7
अक्टूबर 2002 (अतिरिक्तांक)

मूल्य
दसवार्षिक : 1,000 रुपये
त्रिवार्षिक : 300 रुपये
वार्षिक : 100 रुपये
यह प्रति : 7.00 रुपये

सभापति
डॉ० (श्रीमती) मंजु शर्मा

सम्पादक एवं प्रकाशक
डॉ० शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग

मुद्रक
नागरी प्रेस
91/186, अलोपी बाग, इलाहाबाद
फोन : 502935, 500068

आवरण
चन्द्रा आर्ट्स
तालाब नवल राय
बैरहना, इलाहाबाद। फोन : 558001

कम्प्यूटर कंपोजिंग
शादाब खालिद
79/65, सब्ज़ी मण्डी, इलाहाबाद
फोन : 651264

सम्पर्क
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211002
फोन : 460001 ई–मेल : vigyan1@sancharnet.in
वेबसाइट : www.webvigyan.com

विषय सूची

संस्मरण

"पोषणक्षम उपभोग के प्रति हमारी चिन्ता एवं इसका पक्षपोषण इसलिए है कि हम अन्तरिक्ष, समुद्र, हिमनदियों व नहरों जैसे जलस्रोतों, वनक्षेत्रों, वनस्पतियों का संरक्षण कर सकें और सबसे महत्वपूर्ण तो यह है कि हम मानवजाति के बड़े भाग की मानवीय गरिमा की रक्षा कर सकें क्योंकि अपोषणक्षम उपभोग की वर्तमान स्थिति जारी रही तो मानवजाति का बड़ा भाग ईश्वर प्रदत्त वायु व जल के निःशुल्क उपहारों से भी वंचित हो जाएगा। हम जानते हैं कि यह संघर्ष लम्बा व दुष्कर है तथा सबल एवं समृद्ध वर्ग को अपनी विचारधारा बदलने पर सहमत कर पाना बहुत कठिन होगा। तथापि विश्व भर में विवेकवान लोग भी हैं, जो पोषणक्षम उपभोग के मुद्दे पर सहमति बनाने में हमारा साथ देंगे। इस संघर्ष को जारी रखना तथा इसे सफल बनाना हम सभी का दायित्व है।"

- डॉ0 मुरली मनोहर जोशी
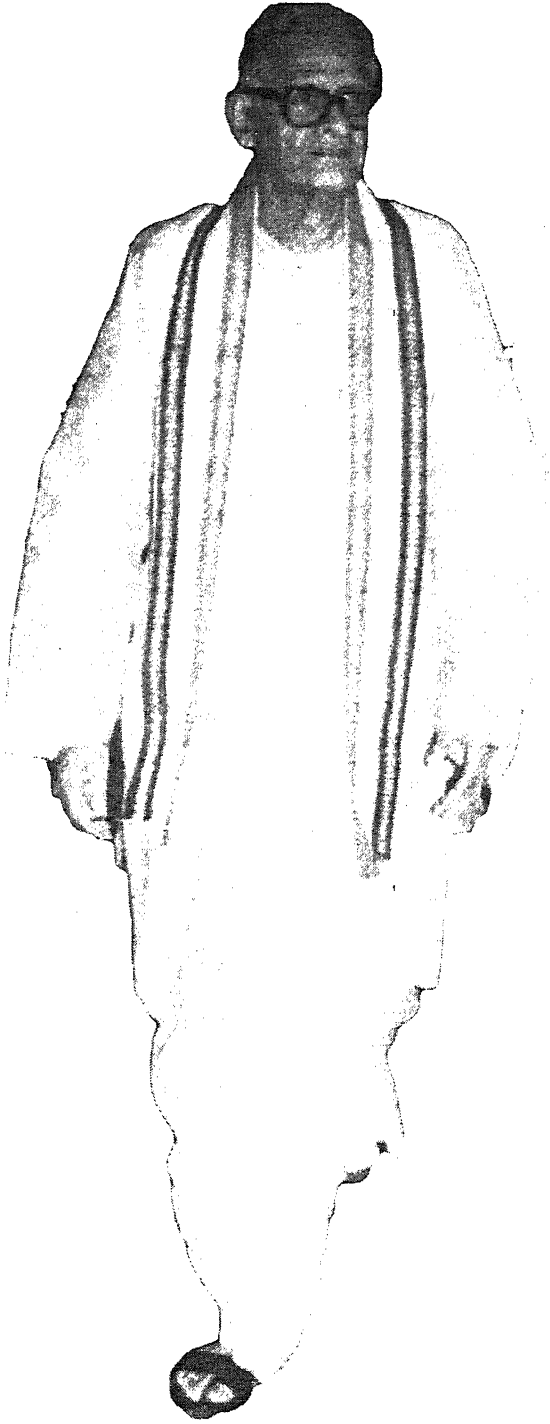
मंगलमयी वैज्ञानिक चेतना को विकसित करना होगा

आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री

भारतीय विज्ञान कांग्रेस–2002 (लखनऊ) के समापन समारोह में दिए गए व्याख्यान का किंचित परिवर्धित रूप

यह हमारा सौभाग्य है कि भारतीय विज्ञान कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन के अवसर पर बड़े–बड़े विद्वान वैज्ञानिक यहाँ पधारे। उनके व्याख्यानों के विवरण प्रतिदिन अखबारों में पढ़ता था तो चकित होता था कि हमारे देश के वैज्ञानिकों ने विज्ञान के विविध क्षेत्रों में इतने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। अपनी आँखों से मैंने आज यहाँ की विज्ञान प्रदर्शनी देखी तो इस बात का विश्वास हुआ कि हमारा देश न केवल सुरक्षा की दृष्टि से बल्कि विकास की दृष्टि से भी पूर्णतः आत्मनिर्भर हो सकता है अब इन क्षेत्रों के अधिकांश प्रकरणों में हमें किसी दूसरे देश का आश्रय लेने का, उनका मोहताज होने का कोई कारण नहीं है। हमारे वैज्ञानिकों ने इतनी योग्यता अर्जित कर ली है कि हमारे देश के औद्योगिक विकास तथा अन्य क्षेत्रों की समस्याओं का समाधान वे कर सकें। अब आवश्यकता इस बात की है कि दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति के द्वारा हम उन उपलब्धियों को व्यवहार में ला सकें।

मैं यह समझता हूँ कि आज का विश्व बिना विज्ञान की सहायता के चल नहीं सकता। भारतवर्ष को अगर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने को प्रतिष्ठित करना है तो हमको अंतर्राष्ट्रीय स्तर की मेधा से प्रतिस्पर्धा करने

वाली मेधा अपने में उत्पन्न करनी होगी। यह मुकाबले का, प्रतिस्पर्धा का युग है। हम किसी भी देश की वैज्ञानिक प्रतिभा से भारतीय वैज्ञानिक प्रतिभा को कम न होने दें, इसके लिए पूरी सरकार, पूरा समाज आपके साथ है। मेरा विश्वास है कि आपकी प्रतिभा देश को उसी प्रकार अपनी सेवाएँ अर्पित करती रहेगी जैसे अभी तक आप करते रहे हैं। अपने देश की विशेषताओं की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ।

हमारे देश में विज्ञान और पुराण का सहअस्तित्व रहा है। आप इस बात पर विचार कीजिए कि हमारे देश में कभी किसी वैज्ञानिक को दण्डित नहीं किया गया, चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, किसी को नहीं। हम सब जानते हैं कि विज्ञान का अपना क्षेत्र है। महाभारत के युद्ध की कथा आपने पढ़ी होगी। जब सूर्य ग्रहण लगा तो युद्ध रोक कर लोग कुरुक्षेत्र में स्नान करने गए। यह सूर्य ग्रहण से पहले से कैसे घोषित किया गया होगा ? क्या केवल राहु–केतु की कथा के आधार पर ? बिल्कुल नहीं। गणित ज्योतिष के आधार पर हमारे पंचांगों में ठीक समय पर, कब सूर्य ग्रहण होगा, कब चन्द्र ग्रहण होगा, इसका निर्देश रहता है और साधारण जनता के लिए राहु–केतु की कहानी भी चलती है। यह विज्ञान और पुराण का सहअस्तित्व है। हम यह मानते हैं कि मनुष्य के कई स्तर होते हैं। वैज्ञानिक जिस स्तर पर है, साधारण मनुष्य उस स्तर पर नहीं पहुँचा तो कोई बात नहीं। उसके स्तर को देखो उसको ऊपर उठाओ। असली बात है कि हम उसे ऊपर उठा रहे हैं कि नहीं ? भिन्न–भिन्न स्तरों पर, साथ साथ काम करते हुए, जब तक हम अपने समाज को ऊपर उठाते रहे, तब तक विज्ञान आगे बढ़ता रहा।

मैं यह मानता हूँ कि विज्ञान की प्रगति रुकने के कारण ही भारत पराजित हुआ। मैं यह मानता हूँ कि विज्ञान की प्रगति जितनी कम होती गई, दुनिया की दौड़ में हम पिछड़ते चले गए। इसलिए आज के युग में हमको विज्ञान को पुनः आगे लाना है। वैज्ञानिक चेतना को विकसित करना है। वैज्ञानिक चेतना के विकास से ही भारतवर्ष आगे बढ़ेगा। लेकिन वैज्ञानिक चेतना को विकसित करने के लिए मैं आपसे बहुत विनम्रता के साथ प्रार्थना करना चाहता हूँ कि भारतीय भाषाओं का सहयोग लें। बिना भारतीय भाषाओं के यह काम आगे नहीं बढ़ेगा। भारतीय भाषाओं में, अगर वैज्ञानिक चेतना के ग्रन्थ नहीं आए, दृष्टि नहीं आई, तो हमारा साधारण भारतीय नागरिक कैसे वैज्ञानिक दृष्टि प्राप्त कर सकेगा ? क्या केवल अंग्रेजी के माध्यम से ? आज भी, इतने लम्बे काल के बाद भी अंग्रेजी का शिक्षण हमारे देश की जनता में चार–पाँच प्रतिशत से ज्यादा नहीं है। 95 प्रतिशत के लिए हम क्या करेंगे ? 95 प्रतिशत लोगों के लिए मेरी अपील है कि हम सब अपनी–अपनी मातृभाषाओं में, मैं किसी एक भाषा का नाम नहीं ले रहा हूँ– अपनी–अपनी मातृभाषाओं में, सामान्य रूप से सामाजिक/वैज्ञानिक चेतना उत्पन्न करने का प्रयास करें। बी.ए., बी.एससी. तक की परीक्षा मातृभाषा में क्यों नहीं हो सकती ? हमारी पत्रिकाओं में, भारतीय भाषाओं में, क्यों नहीं वैज्ञानिक चेतना के लोकप्रिय निबंध आ सकते ? हमारा उद्देश्य उस चेतना से युक्त होगा, हमारे बड़े वैज्ञानिकों को उतनी ही शक्ति प्राप्त होगी। यह काम भी, लोकप्रिय वैज्ञानिक लेखन का काम भी आप ही लोगों को करना है। और कौन करेगा ? जो विज्ञान को जानता है जो विज्ञान के साथ समरस हुआ है, वही विज्ञान की चेतना को सामान्य जनता के स्तर पर उतारने के लिए जब मातृभाषा के माध्यम से अच्छे लेख लिखेगा, वैज्ञानिक दृष्टि को लोकप्रिय बनाएगा, तभी हमारा देश आगे बढ़ेगा। मैंने अपनी मन की बात, अपने दिल का दर्द आपको सुनाया है। मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा अगर यह दर्द आपके दिल में भी जागे।

मित्रो ! हम आपको इस बात का आश्वासन देना चाहते हैं कि उत्तर प्रदेश की सरकार विज्ञान की चेतना का विकास करने के लिए भरसक प्रयास करेगी। आप सब पधारे, हम सब कृतज्ञ हैं, हम सब कृतार्थ हुए कि इतने बड़े–बड़े विद्वानों को, इतने बड़े–बड़े वैज्ञानिकों को हम लखनऊ में पा सके, देख सके, उनको सुन सके और उनके ज्ञान से हमारे पूरे देश के वैज्ञानिकों में एक नया स्पन्दन आया। मैं जानता हूँ कि विद्वानों का जब सम्मेलन होता है तो हम अपनी अपनी उपलब्धियों को कैसे बाँट लेते हैं। इसको अंग्रेजी में ब्रेन पिकिंग कहा

जाता है। हिन्दी में इसे वैचारिक सहभागिता कहा जा सकता है। मैंने कोई काम किया, किसी क्षेत्र में मुझे कोई उपलब्धि प्राप्त हुई, उस उपलब्धि पर जब तक आपकी मोहर नहीं लगेगी मैं कैसे मानूँगा कि वह वस्तुतः उपलब्धि है और आपने, बड़े वैज्ञानिकों ने, कोई बड़ा काम किया है, जब तक मैं उससे परिचित नहीं हूँगा तब तक मेरा विकास कैसे होगा ? बड़े वैज्ञानिक और नए वैज्ञानिकों का यह साथ–साथ मिलना–जुलना, एक–दूसरे को प्रभावित करना, एक–दूसरे को आगे बढ़ने की प्रेरणा देना, यह ऐसे सम्मेलनों का मुख्य कार्य होता है। मुझे विश्वास है, इस सम्मेलन में इस प्रकार का कार्य पारस्परिक सहयोग द्वारा, अपनी–अपनी जानकारी को बाँट लेने का कार्य, बहुत बड़े पैमाने पर हुआ है और उसका बहुत बड़ा लाभ, हमको अपने विज्ञान जगत में, प्राप्त होगा।

मैं सचमुच इस बात से प्रफुल्लित हूँ कि हमारे युवा विद्यार्थियों ने एक नए ढंग से सोचने की शुरुआत की। मैं टेलीविजन पर देख रहा था एक लड़का बोला "मैंने देखा है कि नारंगी के छिलकों के ऊपर मक्खियाँ नहीं हैं और मच्छर भी नहीं हैं, तो मैंने सोचा इसमें जरूर कोई खास बात होगी।" फिर उसने ऐसी चीज बनाई जिससे मक्खी, मच्छर दूर हो सके। छोटे बच्चे को यह वैज्ञानिक दृष्टि कैसे प्राप्त हुई। उस छोटे बच्चे ने वैज्ञानिकों का आशीर्वाद प्राप्त किया। हमारे विद्यार्थी देश के प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों से बातचीत कर सके, यह कितनी बड़ी उपलब्धि है।

विज्ञान के आधारभूत सिद्धान्त तो सार्वभौम हैं किन्तु इन सिद्धान्तों पर आधारित तकनीकी उपकरण और यंत्रों का विकास अलग–अलग देशों में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप अलग ढंग से किया जाना चाहिए। विज्ञान के आविष्कार तभी जनोपयोगी सिद्ध होंगे जब वे देशानुकूल होंगे। उदाहरण के लिए अमेरिका में हजारों एकड़ जोत वाले किसानों के लिए मंहगे ट्रैक्टर उपयोगी हो सकते हैं किन्तु हमारे देश में जहाँ छोटी–छोटी जोत वाले साधारण किसान हैं उनके लिए मंहगे ट्रैक्टर खरीदना और खेती को आर्थिक रूप से लाभकारी बना पाना सम्भव नहीं है। हमारे देश में किसानों के लिए तो कम लागत के विद्युत चालित 'हलों' को विकसित किया जाना चाहिए तभी यह उनके लिए उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध होगा।

सूचना प्रौद्योगिकी ने आज सारी दूरियाँ समाप्त करके पूरे विश्व को नजदीक ला दिया है। इन्टरनेट के जरिए सारी दुनिया में अर्जित ज्ञान अब सबके लिए साझे की चीज हो गई है। लेकिन भारत जैसे देश में जहाँ साक्षरता ही बहुत कम है, अंग्रेजी भाषा पर केन्द्रित कम्प्यूटर कितनी जनसंख्या के लिए उपयोगी हो सकते हैं ? जब तक हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ कम्प्यूटर की भाषा नहीं बनेंगी, हमारे देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा कम्प्यूटर के लाभों से वंचित रहेगा। दूसरी बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि आज साधारण कम्प्यूटर भी खरीदा जाए तो लगभग चालीस–पचास हजार रुपये से कम में नहीं आएगा। कितने लोग हमारे देश में ऐसे हैं जो इतनी बड़ी कीमत देने में समर्थ हैं ? अतः हमारे देश में आम आदमियों के लिए कम कीमत में कम्प्यूटर बनने चाहिए। यह खुशी की बात है कि हमारे वैज्ञानिकों ने 'सिम्प्यूटर' निर्मित किया है जिसकी कीमत 10 हजार रुपये के करीब है। किन्तु उसका उपयोग सीमित क्षेत्रों में ही हो सकता है। मेरा विश्वास है कि शीघ्र ही सस्ते कम्प्यूटर भी हमें प्राप्त हो सकेंगे।

जैव प्रौद्योगिकी के बारे में भी मैं थोड़ी चर्चा करना चाहता हूँ। यह जैव प्रौद्योगिकी बड़ी अद्भुत विद्या है। कुलाधिपति होने के कारण मुझको कई बार भिन्न–भिन्न विश्वविद्यालयों के परिसरों में जाने का सौभाग्य मिला, प्रयोगशालाओं को देखने का सौभाग्य मिला, मैं चकित रह गया। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि ऐसा नहीं है कि जैव प्रौद्योगिकी वाले कोई नई बात कर रहे हैं। पुराने समय से ही हम लोग यह चेष्टा करते रहे हैं कि अच्छी जाति के बीज कैसे उत्पन्न हों ? अच्छे आम के वृक्ष कैसे लगें ? कलम लगाएं या कुछ और विधि अपनायें, लेकिन पुराने समय में यह सारा काम अनुमान के आधार पर होता था। लम्बा समय लगता था, पूरा निश्चय नहीं हो पाता था। आज जैव प्रौद्योगिकी के कारण हम निश्चित रूप से जानते हैं कि कितने अंश में मिश्रण करने से कैसे नई चीज बन सकती है। जो
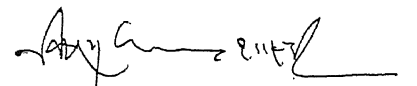
काम छह साल में होता था वह छह महीने में होने लगा है। आपको किस प्रकार का आम चाहिए ? आपको किस प्रकार का टमाटर चाहिए ? यानी उनका रंग कैसा हो, स्वाद कैसा हो, आकार कैसा हो ? यह बिल्कुल निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अब यह संभव है कि हम वैसे फल उत्पन्न कर सकें। मैं हिमाचल प्रदेश में था। हिमाचल प्रदेश सेब का प्रदेश है। वहाँ सेब के ऊपर खूब अनुसंधान होता था। मैंने वहाँ सेब की नई प्रजातियाँ देखीं। इसमें खटास चाहिए कि मिठास चाहिए, जो आपको चाहिए उस प्रकार की प्रजाति के सेब उत्पन्न हो सकते हैं। यह मैंने अपनी आँखों से देखा है। अगर मैं अपनी आँखों से देखकर नहीं आता तो आपके सामने कहने की स्थिति में न होता कि सेब के एक ही पेड़ में आठ प्रकार के सेब लटकते हुए मैंने इन्हीं आँखों से देखे हैं। पेड़ एक है लेकिन उसमें रंग–रूप में अलग–अलग आठ प्रकार के सेब मैंने एक साथ एक डाल में एक प्रकार का, दूसरी डाल में दूसरी प्रकार का और तीसरी डाल में तीसरी प्रकार का सेब देखा है।

हमारी आबादी आज एक अरब हो गई है। एक अरब की आबादी को खिलाने की सम्भावना जैव प्रौद्योगिकीकरण के कारण संभव हो गई है। हम लोग कम क्षेत्र में अधिक उत्पादन कर सकते हैं, कम समय में अधिक उत्पादन कर सकते हैं। विज्ञान की महिमा से यह एक द्वार खुल गया है विराट परिवर्तन का। जो काम पहले हम अनुमान के आधार पर करते रहे हैं, वह हम अब निश्चयपूर्वक कर सकते हैं।

जैव प्रौद्योगिकी मानती है कि 99.9 प्रतिशत हम सब समान हैं। हमारे रंग रूप में आकार–प्रकार का जो परिवर्तन आ जाता है, यह थोड़ा सा ही डी.एन.ए. इधर से उधर करने से हो सकता है। इसलिए अच्छे मनुष्य की अच्छी प्रजाति उत्पन्न की जा सकती है। खतरा यह है कि गलत ढंग से लोगों को भी पैदा किया जा सकता है। कोई भी काम मनुष्य का ऐसा नहीं है जो कि केवल अच्छा हो, जिसमें केवल भलाई हो, बुराई की आशंकाएँ भी रहती हैं। हमारे पुराणों के अनुसार चौरासी लाख योनियाँ मानी जाती हैं। इनमें तिरासी लाख निन्यानबे हजार नौ सौ निन्यान्बे योनियाँ प्रकृति के द्वारा शासित हैं। आज से दस हजार साल पहले पशु–पक्षी, जीव–जन्तु जैसे थे, आज भी वैसे ही हैं, क्योंकि वे सब प्रकृति के द्वारा शासित हैं। अकेली मानव योनि ऐसी है जो प्रकृति के नियंत्रण का अतिक्रमण कर सकती है, अच्छाई की दिशा में भी करती है और बुराई की दिशा में भी। आपको एक भी पशु ऐसा नहीं मिलेगा जो कालाबाजारी करता हो, एक भी पशु ऐसा नहीं मिलेगा जो चोरबाजारी करता हो, जमाखोरी करता हो, जालसाजी करता हो। आपको एक भी ऐसा वृक्ष नहीं मिलेगा जिसकी डालें आपस में लड़ती हों। कोई वृक्ष ऐसा नहीं मिलेगा जिसकी चार शाखाएँ आपस में लड़ती हों। आपको ऐसे हजारों मनुष्य मिलेंगे जो कालाबाजारी करते हैं, चोरबाजारी करते हैं, भ्रष्टाचारी हैं, बेईमान हैं, व्यभिचारी हैं और एक ही परिवार के चार भाई एक–दूसरे का सिर फोड़ देते हैं। मनुष्य जब अच्छा होता है तो देवता हो सकता है और मनुष्य जब बुरा होता है तो राक्षस हो जाता है।

हमको आशंका यह है कि हमारी जैव प्रौद्योगिकी का एक दुरुपयोग यह हो सकता है कि उसके चलते ऐसा मनुष्य भी बने जो एक मानव रोबोट की तरह काम करने लगे, जो केवल फरमाबरदार हो, जिसका अपना विवेक शून्य हो जाए। उसे जो आदेश दिया जाएगा वह बिना विचारे करेगा, यानी वह खतरनाक हथियार बन जाएगा। इसी तरह अणु अस्त्रों, जीवाणु अस्त्रों आदि घोर विध्वंसक हथियारों के दुरुपयोग से उत्पन्न परिस्थिति की कल्पना मात्र से मन दहल उठता है। विज्ञान सचमुच दुधारी तलवार है। इसलिए विज्ञान के विकास पर हमें बराबर दृष्टि रखनी होगी कि इसका विकास मान व मंगल की दिशा में हो, मानव अमंगल की दिशा में कदापि न हो। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि हमारा जीवन स्वस्थ, सुखी हो, हमारा देश प्रगति और समृद्धि के पथ पर निरन्तर अग्रसर होने में समर्थ हो सके।

विज्ञान के बढ़ते चरण

डॉ0 हीरा लाल निगम

विज्ञान परिषद् प्रयाग में 25 अगस्त 2002 को आयोजित सत्य प्रकाश सरस्वती स्मृति व्याख्यान का अंश

शताब्दी की असाधारण विस्मयकारी, दिमाग को झकझोरने वाली कोई भयानक तो कोई मानव कल्याण में विलक्षण योगदान देने वाली खोजों ने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी है कि विज्ञान द्वारा दिए गए नए संसाधन तथा उनके संभावित अच्छे व बुरे परिणामों की जानकारी जन–साधारण तक पहुँचाना आवश्यक हो गया है। विज्ञान के चरण जीवन के अनेक रहस्यमय पहलुओं की गुत्थी को सुलझाने में अत्यन्त तीव्र गति से आगे बढ़ रहे हैं और थोड़े ही समय में की गई उपलब्धियों की तुलना भगवान के बामनावतार में ढाई कदमों में लांघे हुए ब्रह्मांड के समान मानी जा सकती है। विज्ञान के रथ की इसी द्रुत यात्रा की एक झलक यहाँ देने का प्रयास मैं कर रहा हूँ।

क्लोनिंग

इस यात्रा का एक महत्वपूर्ण पड़ाव मानव प्रजनन के नए संसाधनों से है। इयान विलमुट नाम के एक अंग्रेज और उसके साथी वैज्ञानिकों ने डाली नामक भेड़ के जन्म की घोषणा सन् 1997 में की जो प्रकृति रूपी ईश्वर की रचना न होकर अलैंगिक तौर पर जन्मी हुई एक परिपक्व भेड़ की आनुवांशिक प्रतिलिपि यानी क्लोन मानी जाती है। एक स्तनधारी को क्लोन करने की इस चिरपेक्षित किन्तु अनपेक्षित सफलता ने मनुष्य का क्लोन बनाने की संभावना भी हमारे सामने उपस्थित कर दिया है।

क्लोन का शाब्दिक अर्थ है अलैंगिक विधि से प्रजनित संतानें, जो एक दूसरे से सर्वसम/अभिन्न होती हैं। प्रकृति में इसका उदाहरण जुड़वाँ बच्चे हैं जो देखने में भौतिक रूप से और हर प्रकार से समान होते हैं। ये यमज एक ही अण्डे से उत्पन्न होते हैं जो किसी परिस्थिति में दो कोशिकीय अवस्था में अलग होकर प्रत्येक एक सम्पूर्ण जीव बन जाते हैं। एक जैसा आनुवांशिक पदार्थ प्राप्त होने से उन्हें पहचानना कठिन होता है किन्तु डाली के जन्म की कहानी इससे अलग है।

लगभग 35 वर्ष पहले नोबेल पुरस्कार विजेता आनुवांशिकी विशेषज्ञ जोशुआ लैडरबर्ग ने अलैंगिक प्रजनन तकनीक द्वारा सफलतापूर्वक टैडपोलों के क्लोनों का झुंड बनाकर क्लोनिंग की तरफ जनता का ध्यान आकर्षित किया और इसके बाद थोड़े ही वर्षों में डाली का क्लोन बनने पर मानव क्लोने के निर्माण के प्रयास में वैज्ञानिक जुट गए। क्लोनिंग की प्रक्रिया वैचारिक रूप से बहुत सरल है। एक परिपक्व लेकिन अनुर्वर हुए अण्डे का केन्द्रक निकाल कर उसे किसी वयस्क या भ्रूणीय प्राणी की विशेष कोशिका के केन्द्रक से बदल

दिया जाता है। यह कार्य दोनों कोशिकाओं को बिजली की ऊर्जा से संगलित कर किया जाता है। यह नए केन्द्रक वाला अण्डा और इससे विकसित होने वाला शिशु आनुवांशिक रूप से स्थानान्तरित केन्द्रक के स्रोत प्राणी के समान होता है। डाली के मामले में यह केन्द्रक स्तन की वाह्य त्वचा से लिया गया था।

केन्द्रक स्थानान्तरण की प्रक्रिया से आनुवांशिक तौर से समान व्यक्ति या क्लोन असीमित संख्या में रचे जा सकते हैं। ऊतकों के संवर्धन और संरक्षण का अनुप्रयोग करते हुए उन्हें अपने स्रोतों से ज्यादा समय तक जीवित रखा जा सकता है और इस तरह मृतक को भी क्लोन करना संभव नहीं होता। पहले ऐसी धारणा थी कि एक बार भ्रूण कोशिका त्वचा या मांसपेशियों की कोशिकाओं जैसी विशेष कोशिकाओं में विकसित हो जाए तो वे कोशिकाएं उसी रूप में रहेंगी लेकिन डॉ0 विलमुट ने पूर्ण रूप से विभेदित स्तन कोशिका को निश्चेष्ट बनाने वाले कम पोषक माध्यम में रखकर 'रिप्रोग्राम' करके उसे अविभेदित कोशिका की तरह व्यवहार करने पर मजबूर कर दिया यानी क्लोनिंग उन्हीं प्राणियों में संभव हो पाएगी जिनकी कोशिकाओं को उस निश्चेष्ट अवस्था में रोकना संभव हो सकेगा। स्पष्ट है कि अधिक मांस और अधिक दूध देने वाले उत्तम श्रेणी के पालतू पशुओं की क्लोनिंग उन्हें अमरत्व प्रदान करने के लिए की जा सकती है। डॉ0 विलमुट ने 277 वयस्क केन्द्रकों को भेड़ के केन्द्रक रहित अण्डों में स्थानान्तरित किया था और केवल 29 क्लोन भ्रूणों का आरोपण कर पाए थे लेकिन वे अंततः सिर्फ एक जीवित क्लोन मेमने को जन्म दिलवाने में सफल रहे। जीवों में किए गए क्लोनिंग के प्रयासों का संक्षिप्त विवरण सारिणी 1 में दिया गया है।

मानव क्लोन की वैभवशाली आशा कई सपने संजोती है– जैसे एक निःसंतान युगल को शिशु देना, मृत बच्चे, पति–पत्नी की जगह भरना, समलैंगिक स्त्री पुरुषों को प्रजनन की संभावना देना, अनुवांशिक रोगों के खतरे से बचाव की विधि ज्ञात करना, अपने पसंद के जीनोटाइप वाला बच्चा पाना आदि। किन्तु मानव को ईश्वर की सृष्टि में हस्तक्षेप की वीभत्सता भी झेलना पड़ेगा। मनुष्य को क्लोन करने का कोई भी प्रयास जन्म लेने वाले शिशु पर एक अनैतिक प्रयोग होगा क्योंकि क्लोनिंग में दुर्घटनाओं और विकृतियों के भारी जोखिम होते हैं।

इन जोखिमों के बावजूद डॉ0 सेवेनिरो एन्टेनीरो जैस वैज्ञानिक मानव क्लोन बनाने के अपने हठ में अटल हैं। इसी प्रकार के कई प्रयोग लुके–छिपे मानव क्लोनिंग के लिए किए जा रहे हैं और कई प्रयासों के उपरान्त पिछले ही वर्ष अक्टूबर में एडवांस सेल टेक्नोलॉजी की प्रयोगशाला में माइक्रोस्कोप की सहायता से विभाजित कोशिकाओं की खोज की गई और यह घोषणा भी कर दी गई कि केन्द्रकीय प्रत्यारोपण की सहायता से पहला मानव भ्रूण क्लोनिंग से बना लिया गया है।

क्लोनिंग की स्वतंत्रता से क्लोनों की आबादी बढ़ेगी और पिता–पुत्र, पति–पत्नी के रिश्तों में स्नेह ह्रास होगा। सामाजिक व्यवस्था विकृत हो जाएगी और प्रकृति के विपरीत किया गया यह कार्य अत्यन्त आघात पहुँचाने वाला, घिनौना, अरुचिकर, घृणास्पद और अशान्ति फैलाने वाला होगा। महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन ने यह कहा था कि हमें बुद्धि को अपना ईश्वर नहीं बनाना चाहिए। बुद्धि की निगाह प्रक्रिया और अपने औजारों के विषय में बहुत तेज होती है लेकिन ये उद्देश्यों और मूल्यों के प्रति अंधी होती है। क्लोन बनाने का समर्थन करने वाले वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार नहीं करते और उनका विश्वास है कि क्लोनिंग द्वारा मानव शरीर के ऊतक तथा अंग प्रत्यारोपण के लिए सफलतापूर्वक बनाए जा सकते हैं। वस्तुतः यह कार्य शरीर की 'स्टेम' कोशिकाओं द्वारा आसानी से सम्पन्न कराया जा सकता है। ये कोशिकाएँ अमर मानी जाती हैं क्योंकि अन्य कोशिकाएँ केवल सीमित संख्या तक ही विभक्त होने के बाद मर जाती हैं और 'स्टेम सेल' अनगिनत संख्या तक विभक्त हो सकती हैं। सबसे आवयश्यक बात तो यह है कि 'स्टेम' कोशिकाओं में बहुरूपी शक्ति विद्यमान होती है और हेर–फेर द्वारा उन्हें चाहे मांसपेशी, चाहे गुर्दा, चाहे जिगर, चाहे रक्त और

नस कोशिकाओं में विकसित किया जा सकता है। यह 'स्टेम' कोशिका भ्रूणों की प्रारंभिक अवस्था यानी ब्लास्टोसिस्ट में पायी जाती हैं लेकिन भ्रूण से इनको निकालने पर भ्रूण को नष्ट करना पड़ता है जो अमानवीय है। किन्तु अब भारत में ही नहीं वरन सारे संसार में मानव कल्याण के लिए विशेष रूप से मानव शरीर के स्वास्थ्य की दृष्टि से काम करने के लिए इसकी अनुमति मिल चुकी है। अब तो वैज्ञानिकों को यह भी ज्ञात हो गया है कि 'स्टेम' सेल अस्थि मज्जा तथा 'प्लेसेन्टा' के रक्त में भी पाया जाता है। पशु पालन में क्लोनिंग के अनुप्रयोग द्वारा अच्छी नस्ल के सशक्त जानवर पैदा करना आसान है। यह भी संभव है कि बहुत सी जीवनरक्षक औषधियाँ जैसे– मानव इन्सुलिन को भी गाय, भैंस के दूध से प्राप्त किया जा सकता है। यह प्रयास और यह संभावना हमें जीन क्लोनन तथा जीन इन्जीनियरिंग के दूसरे पड़ाव पर ले आती है।

जीन इन्जीनियरी

समस्त चेतन जगत कोशिकाओं से बना है। वस्तुतः कोशिका ही जीवन की इकाई है। मानव शरीर में दस खरब से भी अधिक कोशिकाएँ होती हैं। प्रत्येक कोशिका में केन्द्रक होता है और इस केन्द्रक के अन्दर धागे जैसे आकार की संरचनाएँ होती हैं जो क्रोमोसोम की संज्ञा पाती हैं और गुणसूत्र कहलाए जाने वाले इन्हीं क्रोमोसोमों से किसी जीव की व्याख्या निश्चित होती है। मानव में इन गुणसूत्रों की संख्या 46 है जिसमें 23 पिता की तरफ से और 23 माता की तरफ से प्राप्त होते हैं। क्रोमोसोम मुख्य रूप से एक आनुवांशिक पदार्थ से बने होते हैं जिसको डी.एन.ए. (Deoxyribonucleic Acid) की संज्ञा दी जाती है। डी.एन.ए. में चार मुख्य इकाइयाँ– एडीनिन, गुआनीन, थाईमीन, साइटोसीन होती हैं जिन्हें 'बेस' कहते हैं। यह असल में दो जोड़े हैं जो दोहरी कुंडली बनाकर कोशिका के अन्दर गुणसूत्र के रूप में लिपटे रहते हैं। यह दोहरी कुंडली एक सीढ़ी के रूप में दिखाई पड़ती है जिसकी भुजाएँ शुगर तथा फास्फेट अणुओं से बनी होती हैं और सीढ़ी के रूप में दिखाई पड़ती हैं और सीढ़ी का प्रत्येक चरण रासायनिक बेसों से जुड़े होते हैं। कुंडली के प्रत्येक लड़ (Strand) में ऐसी ही इकाइयाँ होती हैं और उनको न्यूक्लियोटाइड की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार प्रत्येक न्यूक्लियोटाइड में एक शुगर, एक फास्फेट और एक नाइट्रोजन बेस होता है। चार विभिन्न बेस एडिनीन, थाइमीन से और गुआनीन साइटोसीन से जुड़े होते हैं। बेसों के प्रत्येक निश्चित क्रम के लिए एक विशेष कार्य सुनिश्चित रहता है। इस प्रकार डी.एन.ए. के उस टुकड़े को बेसों के क्रम के आधार पर विशेष प्रोटीन बनाने का आदेश मिलता है। लगभग तीन अरब बेस–युग्म होते हैं लेकिन इनमें से केवल पाँच प्रतिशत डी.एन.ए. को ही 'फंक्शनल' जीन या कार्यशील जीन माना जाता है। ज्ञातव्य है कि इन बेसों के क्रम में परिवर्तन कर दिया जाए तो संबंधित जीन के सुनिश्चित कार्य में परिवर्तन किया जा सकता है। वस्तुतः इन्हें वैज्ञानिकों ने अब पढ़ लिया है और मानव जीनकोष बना लिया है और इनमें हेर–फेर करके समस्त चेतन जगत के सूत्रधार विधाता के इन लेखों को वैज्ञानिक फिर से मनमाने ढंग से लिखकर स्वयं ही स्रष्टा बनने का स्वप्न देखने लगे हैं। किन्तु मानव जीन कोष का प्रसंग आगे बढ़ाने के पहले जीन इन्जीनियरी के लाभप्रद पहलुओं की ओर ध्यान कराना आवश्यक है।

वनस्पति में जीन क्लोनन/जीन इन्जीनियरी

पेड़ पौधों में भी इसी प्रकार के जीन पाए जाते हैं। वैज्ञानिकों के लिए जो सपना साकार होना है, वह ऐसी नई किस्म की फसल का पौधा विकसित करना है जिसमें वांछित गुणों का संमेल हो। इसके लिए दो विधियाँ अपनायी जा रही हैं : **(1) जीन समावेश** जिसमें पौधे के गुणों को बदलने के लिए क्लोन का सहारा लिया जाता है। **(2) जीन निष्कासन** जिसमें पौधे में विद्यमान एक से अधिक जीनों को निष्क्रिय बनाने के लिए जीन इन्जीनियरी प्रविधियाँ काम में लाई जाती हैं। कृषि में सबसे बड़ी समस्या तब उत्पन्न होती है जब कीटों के आक्रमण से होने वाली क्षति को बचाने

के लिए फसलों पर नियमित रूप से कीटनाशक छिड़काव किया जाता है। अपनी उच्च विषाक्तता के कारण स्थानीय जैवमण्डल पर ये न केवल अपना प्रभाव डालते हैं, वरन् मनुष्यों को भी हानि पहुँचाते हैं। बहुत से वेधक मक्का जैसी फसल में पत्तियों की निचली सतह पर अण्डे देते हैं। इस कारण फसल पर ऊपर से छिड़का गया कीटनाशी प्रभावहीन रहता है। सर्वप्रथम सीबा–गीगी प्रयोगशाला (नार्थ कैरोलीन) के जैव प्रौद्योगिकीविदों ने मक्के के पौधे के भीतर जीन समावेश द्वारा एण्डोटॉक्सिन का संश्लेषण कराने में सफलता प्राप्त की। यह तो ज्ञात है कि बैसिलस थुरिजिएन्सिस अपने स्पोरुलन के समय अन्तरकोशिकीय क्रिस्टलीय पिंड उत्पन्न् करता है जिसमें डेल्टा–एण्डोटॉक्सिन नामक कीटनाशी प्रोटीन रहता है। यह अक्रिय पूर्वगामी पदार्थ कीट द्वारा खाए जाने के बाद छोटे प्रोटीन में बदल कर कीट के भीतर संलग्न होकर उसे क्षतिग्रस्त कर देता है। धान, कपास, आलू, टमाटर तथा अन्य फसलों में भी डेल्टा–एण्डोटॉक्सिन को उत्पन्न करने के प्रयोग किए जा चुके हैं।

चावल संसार के लिए सबसे प्रमुख अनाज है और इसके फंक्शनल जीन में परिवर्तन करके हम ज्यादा पैदावार देने वाली किस्मों का विकास कर सकते हैं। जीन परिवर्तन की इस प्रक्रिया को 'जेनेटिक इन्जीनियरी' कहते हैं। सन् 1970 में अमेरिका में सदर्न कार्न लीफ ब्लाइट (Southern Corn leaf Blight) नामक एक घातक बीमारी फैली जिसकी वहज से वहाँ पर उगाई गई मक्के की सारी फसल बर्बाद हो गई। कालान्तर में प्रयत्न करने पर वैज्ञानिक जंगली मक्के की एक ऐसी प्रजाति को ढूँढने में सफल हुए जो सामान्य तौर पर उगाई नहीं जा सकती थी परन्तु वह बीमारी से प्रभावित नहीं थी। उसमें पाई जाने वाली नई जीन को निकाल कर मक्के की विकसित किस्मों में जेनेटिक इन्जीनियरी द्वारा प्रत्यारोपित करने से प्राप्त परिवर्तित किस्में बीमारी से होने वाले नुकसान से बचा ली गई। वस्तुतः जेनेटिक इन्जीनियरी की शुरुआत सन् 1978 में हुई जब कैलिफोर्निया के वैज्ञानिकों ने डी.एन.ए. को काटने–छाँटने और जोड़ने की तकनीक विकसित कर ली। पौधे में नए जीन रोपने के लिए एग्रोबैक्टीरियम ल्यूमीफिसियन्स नामक बैक्टीरिया को जीनवाहक बनाया जाता है। पेड़ पौधों में बैक्टीरिया के गुण डाले जाने का एक उदाहरण प्लास्टिक पॉलिमर बनाने वाले जीन का प्रत्यारोपण है और पौधों में बनी यह प्लास्टिक कारखानों में बनी प्लास्टिक की तरह पर्यावरण के लिए समस्या नहीं बनेगी। इसका श्रेय सोमरविले और उनके साथियों को है। प्राणियों के जीन पेड़ पौधों में रोपे जाने के प्रयास का एक रोचक उदाहरण यह है कि कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने जुगनुओं में चमक पैदा करने वाला जीन तम्बाकू के पौधे में डालकर तम्बाकू के पौधे में जुगनू की चमक पैदा कर दी। जीन इन्जीनियरिंग की सहायता से हाल ही में आस्ट्रेलिया की कैल जीन पैसिफिक नामक कम्पनी ने कुछ नीले फूलों से नीला रंग पैदा करने वाला जीन गुलाब में डाल कर नीले गुलाब खिलाने का स्वप्न साकार कर दिया है। वस्तुतः उन जीनों का पता लगा लिया गया है जो फूल खिलाने में समर्थ होते हैं और जिनको कृत्रिम रूप से सक्रिय करके बिना मौसम के भी फूल खिलाए जा सकेंगे। अमेरिकावासी भारतीय मूल के वैज्ञानिक डॉ0 आनन्द चक्रवर्ती ने स्यूडोमोनास बैक्टीरिया के जीन में हेर–फेर करके उससे तेल खाने वाला बैक्टीरिया तैयार किया और पेटेन्ट कराया जिसका उपयोग तेल प्रदूषण से त्रस्त समुद्र तटों पर किया जा सकता है।

चिमेरा

यह भी संभव होगा कि जीन मिश्रण के द्वारा चिमेरा यानि आधा मानव और आधा जानवर बनाया जा सके जो हमारे पुराणों में श्री गणेश तथा श्री नृसिंह के रूप की कल्पना का एक वैज्ञानिक प्रमाण होगा।

मानव जीनोम प्रोजेक्ट

मानव के जीनों के क्रम पूरी तौर से ज्ञात कर लिए जाने की संभावना का प्रयास सबसे पहले 1984–85 में न्यूयार्क यूनिवर्सिटी में प्रो0 चार्ल्स केन्टर प्रयोगशाला में हुआ। बेकर यीस्ट के λडी.एन.ए. बहुलक तथा

क्रोमोसोमों को 'पल्स–फील्ड–जेल–इलेक्ट्रोफोरेसेस' की विधि से अलग कर दिया गया, इससे पूर्व 'इलेक्ट्रोफोरेसेस' विधि से 30 हजार न्यूक्लोटाइड से बड़े टुकड़े नहीं पृथक किए जा सकते थे और 3 अरब न्यूक्लोटाइड जीनोम में 30 हजार न्यूक्लोटाइड के 1 लाख टुकड़े निकलते थे, उनको पुनर्व्यवस्थित करना दिमाग को चकराने वाला काम होता था। वैसे तो 1977 में ओलिगोन्यूक्लोटाइड का एक छोटा सा टुकड़ा क्रमबद्ध किया जा चुका था। इसी समय 'यीस्ट आर्टिफिसियल क्रोमोसोम विधि' का विकास हुआ जिससे डी.एन.ए. के बड़े टुकड़ों का क्लोनन भी किया जा सकता था। एक और विधि थी पॉलिमर विनिमय अभिक्रिया (Polymer Exchange Reaction) जिसमें छोटे ओलिगोन्यूक्लोटाइड को क्रमबद्ध करके उनका विस्तार किया जा सकता था। इन तीनों विधियों की सहायता से युनाइटेड स्टेट्स में सरकारी तौर पर 1990 में मानव जीनोम प्रोजेक्ट आरम्भ किया गया जिसकी अवधि 15 वर्ष दी गई थी और जिसमें तीन अरब डालर के खर्च का अनुमान था। किन्तु जीवन के रहस्य उद्घाटन की सशक्त इच्छा के कारण कार्य इतना तेजी से चला कि 26 जून 2000 को मानव जीनोम प्रोजेक्ट के पूर्ण होने की घोषणा अमरीका के तत्कालीन राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के द्वारा कर दी गई। इसमें साथ–साथ तो नहीं अपितु स्वतंत्र रूप से काम करने वाली बायोटेक्नोलॉजी सेलेरा कम्पनी को भी उतनी ही अहमियत दी गई। अमानवीय जीवों में भी यह जीन–क्रम तुलनात्मक अध्ययन के लिए ज्ञात किए गए हैं जैसे कि बैक्टीरिया एस्चेरीशिया कोलाइ, यीस्ट सेक्रोमाइसिस सेरीविसी, फ्रूट फ्लाई ड्रोसोफिली मेलनोगेस्ट तथा राउन्डवर्ड कैनरो हैब्डाइटिस एलीगेन्स। मूषकों में भी अध्ययन काफी प्रगति पर है, मानव जीनोम प्रोजेक्ट से मानवीय स्वास्थ्य के क्षेत्र में, विशेष रूप से औषधि के क्षेत्र में चमत्कारिक सफलता मिलने की आशा है और कुछ अजेय रोगों जैसे डायबेटीज, कैंसर, एड्स, एल्जाइमर रोग, पार्किंसन रोग का निदान संभव होने की आशा है।

रीवा का लाल : हीरालाल

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि विज्ञान परिषद डा0 हीरालाल के सम्मान में विज्ञान का विशेषांक प्रकाशित करने जा रही है। हीरालाल ने हमारे शहर रीवा का नाम देश विदेश में रोशन किया है। हीरा का मेरा बचपन से घनिष्ठ संबंध रहा है। हम लोग मारतण्ड स्कूल तथा दरबार कालेज में साथ-साथ पढ़े। हीरा स्वभाव से बड़े मिलनसार तथा विनोदी थे। छात्रों में इनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी, क्योंकि ये हमेशा प्रवीणता सूची में प्रथम रहते थे। हाकी इनका प्रिय खेल था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में भी हम लोग साथ रहे और एक निजी निवास (दिलकुशा कटरा) में साथ रहते थे।

ये रसायनशास्त्र में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में एम0एस-सी0 किये। डाक्टरी पढ़ने एम0एन0 मेडिकल कालेज, आगरा चला गया। मेरा साथ इनसे छूट गया। बाद में ये रीवा विश्वविद्यालय के कुलपति बने।

मैं इनके शतायु होने की ईश्वर से कामना करता हूँ। **- डा0 निरंजन सिंह**

चाचा से सीखो

हमारा परिवार धन्य हो गया था जिस क्षण् श्रद्धेय दादा स्व0 श्री बद्री प्रसाद निगम के पुत्र व श्रद्धेय पापा स्व0 श्री सुन्दर लाल जी के अनुज के रूप में हमारे चाचा श्री डा0 हीरालाल जी निगम ने जन्म लिया। परिवार में पापा को 'बड़े' तथा चाचा को 'छोटे' नाम से पुकारा जाता था। स्व0 दादा के परमाशीष एवं पापा के मार्गदर्शन में सफलता के तमाम आयाम तय करते हुए चाचा ने विज्ञान जगत की उच्चतम सीढ़ियाँ चढ़ते हुए अपने जीवन में न सिर्फ योग्य शिक्षाविद् बल्कि एक अतिकुशल प्रशासक की अमिट छाप अंकित की। पापा ने उन्हे उन्नति के उस पथ पर देखा था जहाँ बिरले ही पहुँच पाते हैं इसीलिए पापा हम सभी से सदैव कहते थे- "चाचा से सीखो।" **- हृदयेश निगम**

एल्यूमिनियम आइसोप्रोपाक्साइड गाथा की स्वर्ण जयन्ती

डॉ0 राम चरण मेहरोत्रा

यद्यपि रसायनज्ञ एल्यूमिनियमआइसो-प्रोपाक्साइड, $Al(OPr)_3$ लगभग शताब्दि से प्रसिद्ध मोरबाइन-पॉण्डार्क उत्प्रेरक के रूप में उपयोग करते रहे हैं, तथापि यह भी आश्चर्यजनक तथ्य है कि सन् 1952 तक इस साधारण से यौगिक की आण्विक संरचना के बारे में नितान्त अनभिज्ञता थी। विभिन्न देशों के श्रेष्ठ वैज्ञानिकों ने इसके अणु भार का मापन करके इसे द्वि-आण्विक से दशक आण्विक तक दर्शाया था। सच तो यह है कि समस्त धात्वीय एल्काक्साइडों ही के बारे में सन् 1950 तक ज्ञान अत्यन्त न्यून था। बर्कब्रेक कालेज में टाइटेनियम तथा ज़रकोनियम एल्काक्साइडों के बारे में प्रोफेसर वार्डला तथा डॉ0 ब्रैडली के निर्देशन में शोध करके हम लोगों ने एल्काक्साइड रसायन को सर्वथा नवीन दिशा प्रदान की। इनकी राय थी कि लन्दन की पीएच. डी. डिग्री के लिए मैंने 15-16 महीनों ही में पर्याप्त कार्य सम्पन्न कर लिया था। अतएव मेरे निदेशक महोदय ने स्वयं मुझे प्रोत्साहित किया कि अपनी फेलोशिप के बचे हुए 8-9 महीनों में 'मैं' बिल्कुल स्वतंत्र रूप से इच्छित कार्य करूँ।

इस प्रकार सन् 1952 में मेरा ध्यान Al(OPr) की ओर आकर्षित हुआ। अतिकुशल वैज्ञानिकों द्वारा प्रकाशित परीक्षण परिणामों की अस्तव्यस्तता देख कर मेरा ध्यान स्नातक स्तर पर अर्जित ज्ञान की ओर गया। हम सब जानते हैं कि नयी $Al(OH)_3$ अवक्षेप अति तनु अम्लों में भी घुल जाता है, परन्तु यदि उसे काफी देर पड़ा रहने के बाद के बाद अम्लों में घोलने का प्रयत्न किया जाए, तो धीरे धीरे उसकी विलयशीलता कम होने लगती है। बाइजर आदि भौतिक रसायनज्ञों ने इस तथ्य को समझाने के लिए यह विचार प्रस्तुत किया था कि कालावधि बढ़ने के साथ इसका बहुलीकरण अधिक होता जाता है जिसके कारण उसकी घुलनशीलता कम होती जाती है। मेरे मस्तिष्क में यह विचार कौंधा कि हो सकता है कि $Al(OPr)_3$ का भी कालावधि के साथ बहुलकीरण बढ़ जाता हो, जिससे प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के परीक्षण फलों का अन्त आसानी से समझाया जा सकता है। एक साधारण प्रयोग से ही धारणा सिद्ध हो गई। मैंने देखा कि एल्यूमिनियम आइसोप्रोपाक्साइड का आसवन लगभग 1 मिमी दाब पर 150°C पर हो जाता है और वाष्पीय अवस्था में उसके अणु द्विआण्विक होते हैं। द्विआण्विक वाष्प त्रिआण्विक द्रव के रूप में प्रकट होता है और इस त्रिआण्विक द्रव को 8-10 दिन शुष्क वातावरण में पड़ा रहने दिया जाए तो यह चतुर्आण्विक $[\{Al(OPr)_3\}_4]$ क्रिस्टलों के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इसके बाद इसकी और अधिक बहुलकीकरण की गति अपेक्षतया बहुत ही धीमी होती जाती है। इसको काल प्रभावन (Ageing effect) का नाम दिया गया और आगे चल कर यह प्रभाव बहुत से धात्वीय एल्काक्साइडों में प्रकट हुआ।

मेरे कई वरिष्ठ साथियों ने सलाह दी कि ऐसा महत्वपूर्ण निष्कर्ष किसी प्रसिद्ध विदेशी शोध पत्रिका में छापना अधिक श्रेयस्कर होगा क्योंकि इससे अन्य वैज्ञानिकों का इस ओर ध्यान अधिक सुगमता से आकर्षित

हो सकेगा। यद्यपि अब तो अन्य क्षेत्रों की ही भाँति भारतीय वैज्ञानिकों की मनोवृत्ति बदलती जा रही है, तथापि उस समय (1952) हम में राष्ट्रीय भावना शायद अधिक प्रबल थी और मैंने यह निष्कर्ष अपने 'जनरल ऑफ इण्डियन केमिकल सोसाइटी' में छापना पसन्द किया। शीघ्र ही मेरे पास अन्य विदेशों के वैज्ञानिकों के एकाध प्रशंसा पत्र आए ही क्योंकि परीक्षण करने पर उन्हें मेरे निष्कर्ष की सत्यता की पुष्टि मिली। परन्तु संसार भर में सर्वाधिक मात्रा में $Al(OPr)_3$ की उत्पादक हाशी केमिकल कम्पनी के रसायनज्ञों ने मेरे निष्कर्ष के बारे में कई बार मुझसे पूछताछ की।

सन् 1961 में अमरीका में अनेक स्थानों पर भाषण क्रम में वायुयान इंजनों में अचानक व्यतिक्रम हो जाने के कारण क्लीवलैण्ड हवाई अड्डे पर 6–7 घण्टे सहसा ही रुक जाना पड़ा। मन में सोच ही रहा था कि क्या करूँ कि एकदम से याद पड़ा कि हाशी केमिकल कम्पनी तो क्लीवलैण्ड ही में है। कौतूहलवश डाइरेक्टरी में उसके शोध निदेशक का नम्बर देखकर मैंने फोन मिलाया। फोन पर ज्योंही मैंने कहा कि मैं एक भारतीय वैज्ञानिक मेहरोत्रा बोल रहा हूँ। तुरन्त ही उत्तर मिला, क्या आप वही प्रोफेसर मेहरोत्रा हैं जिन्होंने 1953 में $Al(OPr)_3$ के 'एजिंग इफेक्ट' के बारे में अपने निष्कर्ष प्रकाशित किए थे। मेरी स्वीकृति पर उन्होंने मुझे तुरन्त सादर आमन्त्रित किया और अपनी गाड़ी में मुझे अपनी प्रयोगशााला में ले गए। बात बात में पता चला कि वे अपनी एक समस्या से बहुत परेशान थे। उनके बड़े ग्राहक तो उनके द्वारा उत्पादित $Al(OPr)_3$ से सन्तुष्ट थे, परन्तु छोटी मात्रा के ग्राहक प्रायः शिकायत करते थे कि कम्पनी से प्राप्त $Al(OPr)_3$ ठीक नहीं होता, उन्हें उसके क्वथनांक से कहीं अधिक ऊँचे ताप पर गरम करना पड़ता था जिसके बाद वह सहसा ही एकदम बहुत अधिक मात्रा में आसवित होकर ग्राहय नलियों आदि के छेद को बन्द कर देता था। मुझे सन्देह हुआ कि शायद छोटी मात्रा के ग्राहक को $Al(OPr)_3$ बहुत दिन अपने गोदामों में रख कर आवश्यकतानुसार आसवित करने का प्रयास करते होंगे। इस शंका का उनसे 'हाँ' में उत्तर मिलने पर मैंने कहा कि उनकी समस्या का समाधान मेरे 1953 के लेख में ही है। बहुत दिनों तक गोदाम में रखा $Al(OPr)_3$ अधिक बहुलीकृत हो जाता होगा, उनको सलाह दी कि वे आसवन करते समय क्वथनांक के निकट पहुँचने पर रुक जायें, तो अति बहुलीकृत $Al(OPr)_3$ द्विआण्विक $\{Al(OPr)_3\}_4$ में परिवर्तित हो जाएगा और तब वह आसानी से पूर्व निश्चित ताप पर बिना किसी कठिनाई के आसवित हो जाएगा। उन्होंने मेरे कथन पर सन्देह प्रकट किया, तो मैंने उनसे छोटे ग्राहकों से वापस आए $\{Al(OP)_3\}_n$ का एक नमूना मंगाया। पहले मैंने आसवन उपकरण में उसे तेजी से गरम किया तो लगभग 150–160° पर एक साथ तेजी से सबका सब आसवित हो गया। इसके बाद उसी नमूने की थोड़ी सी मात्रा दूसरे उपकरण मं ली और पहले ही की भाँति उसे 1 मिमी दाब पर गरम किया, जब इस दाब पर क्वथनांक 100° हो गया तो मैंने गरम करने की तीव्रता कम कर दी, 3–4 मिनट में बुदबुदे तेजी से उठने लगे, तो मैंने द्रव का ताप 5–7° बढ़ा दिया जिस पर वह बिल्कुल आसानी से धीमे धीमे स्रवित होने लगा। मेरी इस पुष्टि से कम्पनी के मालिक बहुत प्रफुल्लित हुए कि उन्हें बहुसंख्यक छोटी मात्रा के ग्राहकों की शिकायतों से निजात मिल जाएगी। इसके बाद वे मुझे अपनी आवश्यकतानुसार अनेकानेक यौगिक भारत भेजते रहे जिससे मुझे अपने खोज कार्य में बहुत सहायता मिली। यह अनुभव तो मेरे लिए अत्यन्त प्रसन्नतादायक था, परन्तु $Al(OPr)_3$ ही के उपयोग की दूसरी अनुभूति मेरे लिए प्रारम्भ में पीड़ादायक सिद्ध हुई, परन्तु बाद में वह भी मेरे लिए अत्यन्त सुखद थी।

अन्य धात्वीय एल्काक्साइडों की ही भाँति $Al(OPr)_3$ का भी एक विशिष्ट गुण होता है जैसे बड़े एल्कोहलों से अतिसुगमता से प्रतिकृत होकर नए यौगिकों में परिवर्तित हो जाता है। मैंने उसकी इस क्रियाशीलता का लाभ उठाकर अनेकानेक नए यौगिक बनाए, इन प्रयोगों से यह भी स्पष्ट हो गया कि $Al(OPr)_3$ के दो आइसोप्रोपॉक्सी समूह तो आसानी से विस्थापित हो जाते हैं, परन्तु इसका अन्तिम आइसोप्रोपॉक्सी समूह अपेक्षतया बहुत धीमी गति से विस्थापित होता है और इस अन्तिम अवस्था की प्रक्रिया के लिए बेंजीन विलयन

से विस्थापित आइसोप्रोपेनॉल के साथ एज़ियोट्रोप के रूप में आसवित कर लेने से प्रक्रिया को पूरा करने में सफलता मिल जाती है। मैं इस प्रकार के विस्तृत अध्ययनों के बाद प्रयोगशाला में जाना कम कर रहा था और पुस्तकालय में अधिक समय व्यतीत कर रहा था, भारत लौटने के 5–6 दिन पहले मेरी निगाह 'जरनल ऑफ फिजिकल केमिस्ट्री' में 1949 में छपे दो समीक्षा लेखों पर जिनमें ग्रे तथा अलेक्जेंडर ने विस्तार से वर्णन किया था कि एल्यूमिनियम के त्रिकार्बोक्सलेट व्युत्पन्न तो बनाए ही नहीं जा सकते। हुआ यह था कि 1930 से 1949 तक लगभग 22 दर्जन रसायनज्ञों ने इस ओर प्रयत्न किया था परन्तु प्राप्त व्युत्पन्न में कार्बोक्सिल समूह तथा एल्यूमिनियम का अनुपात 2 या 2 से कम ही मिलता था। प्रोफेसर मैक्बेन ने जो बाद में भारतीय नेशनल केमिकल लेबोरेट्री के प्रथम निदेशक भी नियुक्त हुए इसके लिए एल्यूमिनियम एल्कॉक्साइडों का भी उपयोग किया था, परन्तु वह भी त्रिकार्बोक्सिलेट नहीं बना पाए थे। इन्हीं असफलताओं के आधार पर उपर्युक्त समीक्षाओं में समझाया गया था कि क्यों एल्यूमिनियम त्रिकार्बोक्सिलेट बनाना असम्भव ही रहेगा। मुझे इन लेखकों के तर्क कुछ थोथे से लगे और मन में आभास हुआ कि यह तो वही समस्या है कि आइसोप्रोपाक्साइड आदि के दो समूह तो सुगमता से विस्थापित हो सकते हैं परन्तु तीसरे को विस्थापित करने में अपेक्षतया कठिनाई होती है। सब उपकरण तो मौजूद ही थे और मैंने दसूरे दिन ही प्रयोगों से एल्यूमिनियम त्रिकार्बोक्सिलेट बनाने में सफलता प्राप्त कर ली।,

इस प्रकार के दो एल्यूमिनियम त्रिकार्बोक्सिलेट के नमूने बना कर मैंने उनमें एल्यूमिनियम की मात्रा निर्धारित की और वह ठीक आने पर दोनों के थोड़े थोड़े नमूने अपने मित्र डॉ0 ब्रैडली को सौंप दिए कि आक्सफोर्ड की वाइलर एण्ड स्ट्राइप्स कम्पनी से उनके C/H विश्लेषण कराकर परीक्षाफल मुझे भारत में इलाहाबाद के पते पर भेज दें। कुछ दिन बाद डॉ0 ब्रैडली का पत्र मिला तो अत्यन्त ही प्रसन्नता हुई कि C/H परीक्षाफल भी एल्यूमिनियम की ही भाँति बिल्कुल ही त्रिकार्बोक्लिट यौगिकों के अनुकूल थे।

मुझे स्पष्ट आभास था कि श्रेष्ठ रसायनज्ञों की असफलताओं के बाद मुझे अपने निष्कर्षों की अधिक पुष्टि करने की परम आवश्यकता है। मुझे यह भी स्पष्ट था कि यदि मेरे उपकरण में कहीं से वायु का भी जलवाष्प पहुँच गया तो मेरे निष्कर्ष बिल्कुल निर्मूल हो जाते। इलाहाबाद में अपने परीक्षणों को दुहराने की कोई भी सुविधा मुझे उपलब्ध नहीं थी। अतएव बहुत सोच विचार के बाद मैंने अपने परीक्षाफल ब्रिटेन की साप्ताहिक मैगज़ीन 'नेचर' में छपवा दिए जिससे मेरा लेख वहाँ के रसायनज्ञों को तुरन्त आकर्षित कर सके और उनकी प्रतिक्रिया मुझे प्राप्त हो सके। उपर्युक्त लेख प्रकाशन के 54–5 सप्ताह बाद ही मुझे प्रोफेसर एलेक्ज़ेण्डर का पत्र मिला कि मेरे द्वारा प्रकाशित तथ्य उनके कथन को गलत साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, अधिक क्षोभ तो मुझे इस वाक्य से हुआ कि मेरा यह प्रकाशन भी अन्य भारतीय वैज्ञानिकों की ही भाँति है, जो अधकचरे साक्ष्य पर ही अपने निष्कर्ष प्रकाशित कर देते हैं।

मैंने उनको तुरन्त उत्तर दिया कि मैं स्वयं भी अपने निष्कर्षों से पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं था, परन्तु अभाग्यवश मैं तो अपने लन्दन प्रवास के अन्तिम 4–5

$$2Al(OPr')_3 + 4RCOOH \xrightarrow[\text{तुरन्त}]{\text{बेंजीन}} (RCOO)_2\, Al(\mu\text{-}OPr')_2(OOCR)_2 + 4Pr'OH \uparrow$$

$$(1) + 2RCOOH \xrightarrow[\text{बहुत धीमी प्रक्रिया}]{\text{बेंजीन}} 2(RCOO)_3\, Al + 2Pr'OH \uparrow$$

अर्थात् :

$$Al(OPr')_3 + 3RCOOH \xrightarrow[\text{बेंजीन}]{} (RCOO)_3\, Al + 3Pr'OH \uparrow$$

$$(R = C_{15}H_{31} \text{ तथा } C_{17}H_{35})$$
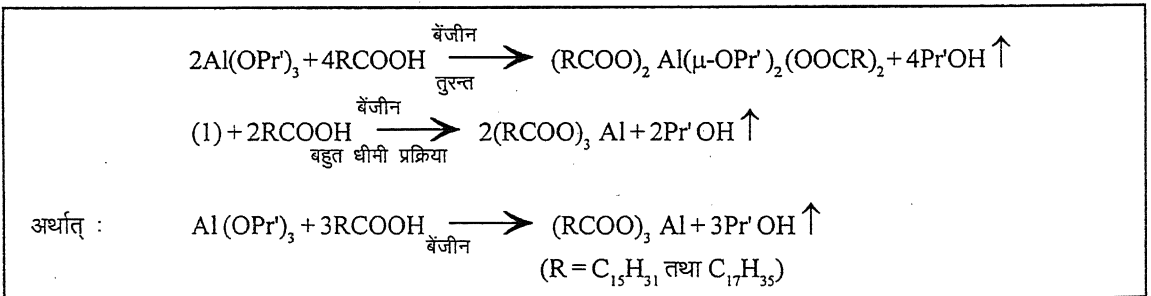
दिनों में आवश्यक प्रयोग करके अब भारतवर्ष लौट आया हूँ, जहाँ मेरे पास अपने निष्कर्षों को पूरी तरह जाँचने की सुविधा नहीं है। मैंने स्वयं ही उनको कुछ और प्रयोग अंकित किए जिससे मेरे निष्कर्ष की पुष्टि हो सकती थी। इसके कुछ ही मास बाद भाग्यवश एक रिसर्च प्रोजेक्ट मिल गई जिस पर मैंने एक अत्यन्त मेधावी विद्यार्थी कैलाश चन्द्र पाण्डे की नियुक्ति कर ली। तीन चार मास अन्य प्रयोगों से हम एन्यूमिनियम त्रिकार्बोक्सिलेट बनाने की उपर्येक्त सरल विधि की पुष्टि करने में सफल हो गए। हम दोनों न इन प्रयोगों में प्राप्त परीक्षाफलों को भी अन्य शोधपत्रों में छाप दिया। इसके लगभग 10–12 वर्षों बाद अलेक्ज़ेण्डर के सहयोगियों ने ब्रिटेन की शोधपत्रिका 'जनरल ऑफ केमिकल सोसाइटी' में 1965 में इन त्रिकार्बोक्सिलेटों को बना कर उनके अनेकानेक शोध लेख प्रकाशित किया, जिसका सारांश (abstract) अल्प शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया गया था कि "एल्यूमिनियम त्रिकार्बोक्सिलेट संश्लेषण के लिए मेहरोत्रा द्वारा दर्शाई पद्धति की पूरी पुष्टि कर ली गई है।" कुछ दिनों बाद प्रोफेसर एलेक्जेण्डर का एक व्यक्तिगत पत्र भी मिला, जिसमें उन्होंने अपने पहले के पत्र में लिखी बातों के लिए क्षमायाचना की थी।

इसके बाद हम लोग पिछले 30–40 वर्षों से द्वि एवं त्रिधात्वीय एल्काक्साइडों के संश्लेषण में संलग्न रहे हैं, जिनमें $\{KAl(OPr)_4\}$ का उपयोग बहुतायत से किया जा रहा है, उदाहरणार्थ :

$$MCln + n\,Kal(OPr')4 \longrightarrow [M\{Al(OPr')_4\}_n] + nKCl\downarrow$$

[M = Be, Mg, Zn, Cd, Sc, Y, Ln, Ba, Jn, Th, Sn, Sb, Bi, Cr, Mn, Fe, Co, Ni, Cu आदि]
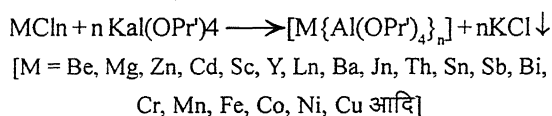
सन् 1977 में इण्डियन केमिकल सोसाइटी ने कोआर्डिनेशन रसायन के अतिप्रसिद्ध प्रोफेसर प्रियदारन्जन राय की जन्म शताब्दि पर प्रकाशन स्मारक अंक में मुझसे अपना एक लेख देने का आमंत्रण दिया। मैं उस समय दिल्ली विश्वविद्यालय का कुलपति था, जहाँ मैंने अपनी एक नई प्रयोगशाला स्थापित की थी और तीन–चार नए शोध विद्यार्थी भी ले लिए थे, जिससे प्रातः 5 से 8 बजे तक और सुविधानुसार शाम को भी बात करता था। कार्यभार के बढ़ते हुए बोझ के कारण मैं और नए विद्यार्थी लेना नहीं चाहता था। एक नवयुवक जगवीर सिंह लगभग नित्य ही मुझसे इसके लिए अनुरोध कर रहा था, थक कर मैंने उसे अपने 'चतुर्आइसोप्रोपाक्साइड एल्यूमिनेट $(\{Al(OPr)_4\}$ बन्धकों (ligands) वाले शोधलेखों की प्रतिलिपियाँ दीं और उससे कहा कि इनका अध्ययन करके इनके आधार पर इस विषय पर एक समीक्षा लेख लिखने का प्रयास करे। लगभग एक सत्ताह बाद मैं उसकी पाण्डुलिपि से इतना प्रभावित हुआ कि उसे मैंने अपने निर्देशन में शोध करने के लिए दाखिला दे दिया तथा उसे प्रथम बार कोबाल्ट, निकेल, कॉपर के व्युत्पन्नों को संश्लेषित करने की सलाह दी। यह कार्य अपेक्षतया कुछ कठिन अवश्य था, परन्तु प्राप्त व्युत्पन्नों के स्पेक्ट्रा आदि लेने की सुविधा मुझे दिल्ली विश्वविद्यालय एवं नेशनल फिजिकल तथा डिफेन्स प्रयोगशालाओं में उपलब्ध थी, जिनकी सहायता से उनके विस्तृत कोआर्डिनेशन रसायन की व्याख्या सम्भव थी। इन निष्कर्षों को जब मैंने 1979 में श्रीनगर में आयोजित एक कांफ्रेंस में प्रस्तुत किया, तो श्रोताओं में उपस्थित डॉ0 हीरा लाल निगम ने प्रशंसा की कि यह कार्य तो कोआर्डिनेशन रसायन में एक नई दिशा का शुभारम्भ है। 1980 में मुझे टोलूस (फ्रांस) में आयोजित होने वाली 'इण्टरनेशनल कांफ्रेंस ऑफ कोआर्डिनेशन केमिस्ट्री' के अधिवेशन में एक विशिष्ट भाषण के लिए आमंत्रण मिला, जो स्वयं में आश्चर्यजनक था क्योंकि मैंन उसकी कांफ्रेंस के साओ–पावलो (ब्रेजिल) के 1977 के अधिवेशन में लैन्थनाइड तथ्वों के व्युत्पन्नों पर विशिष्ट भाषण के लिए आमन्त्रित हो चुका था।

इस प्रकार विभिन्न धातुओं से सम्मिलित स्थायी कोआर्डिनेशन यौगिकों के एक नए अध्याय का शुभारम्भ हुआ, जिस दिशा में आज भी ऐसी तेजी से शोध हो रहा है कि इनसे सम्बंधित 1 दर्जन शोधपत्र सन् 2001–2002 में प्रकाशित कर चुके हैं। स्वाभाविक ही है कि इस सबके लिए मैं अपने 6 दशक पुराने विद्यार्थी मित्र हीरा लाल निगम का पात्र आभारी हूँ।

4/682, जवाहर नगर
जयपुर-302004

मानव जीनोम

डॉ0 लाल जी सिंह

लेखक सेन्टर फार सेल्युलर एण्ड मोलिक्युलर बायोलॉजी हैदराबाद के निदेशक हैं।

आज से करीब 135 वर्ष पहले (1866) बोहेमियन भिक्षुक ग्रेगर मेण्डल ने मटर के ऊपर किए गए प्रयोगों का परिणाम प्रकाशित किया था जिससे आनुवांशिकी (Genetics) के अध्ययन का एक नया युग प्रारम्भ हुआ। उन्होंने इस आनुवांशिकीय इकाई का नाम 'जीन' रखा तथा इनके पृथक होने के नियमों का गठन किया। थामस हंट मार्गन ने 1910 में ड्रोसोफिला (फल मक्षिका) के ऊपर शोधकार्य करते हुए यह सिद्ध किया कि जीन गुणसूत्र (क्रोमोसोमों) में एक सीधी पंक्ति में सजाए हुए रहते हैं। और कौन सा जीन गुणसूत्र में किस जगह पर है यह भी पता लगाया जा सकता है। हर्मन मुलर ने 1926 में खोज किया कि ड्रोसोफिला में जीन में एक्सरे से आनुवांशिकीय परिवर्तन हो जाता है जिसे उत्परिवर्तन कहते हैं। 1944 में यह प्रमाणित हुआ कि प्रोटीन नहीं बल्कि डी.एन.ए. ही 'जीन' होता है। 1953 में वाट्सन और क्रिक ने डी.एन.ए. की संरचना का पता लगाया और बताया कि यह दो तंतुओं से बना हुआ घुमावदार सीढ़ी (Double helix) के आकार का होता है।

पिछले बीस वर्षों में आणविक जीवविज्ञान तथा कंप्यूटर प्रौद्योगिकी की महान प्रगति हुई है जिसकी मदद से मनुष्य की बहुत सारी आनुवांशिकीय बीमारियों के जीनों की पहचान हो पाई है। आज इस शताब्दि के अन्त में हमें मनुष्य के सम्पूर्ण डी.एन.ए. पंक्तिक्रम (Sequence) की उपलब्धि हो गई है, जिसकी वजह से आनुवांशिकी क्षेत्र में एक नई क्रान्ति आई है जिसका बीमारियों की रोकथाम, उनकी पहचान तथा बीमारियों से छुटकारा पाने इत्यादि में उपयोग आवश्यक हो गया है। बहुत सारी बीमारियों का एक आनुवांशिकी आधार होता है, जैसे कि डी.एन.ए. के पंक्तिक्रम में आंशिक क्षति से लेकर संक्रामक एड्स जैसी बीमारियों तक। लेकिन एड्स क्यों ? हाल ही में कुछ लोग ऐसे पाए गए हैं जिन पर एच.आई.वी. का कोई असर नहीं होता, यहाँ तक कि मनुष्य के चाल चलन के लिए भी शायद जीन ही जिम्मेदार हैं। मानवीय व्यवहार के किसी भी पहलू को देखिए तो जीन के साथ उसका अटूट सम्बन्ध दिखाई देगा। प्रत्येक महीने कोई न कोई नई खोज किसी न किसी नए जीन का सम्बंध मनुष्य के सामान्य व्यवहार से जोड़ती हुई दिखाई दे रही है। आजकल व्यक्तित्व की जानकारी के लिए लोगों का रक्त लेकर डी.एन.ए. का परीक्षण किया जा रहा है। इसलिए मानव जीनोम का महत्व बहुत बढ़ गया है। यहाँ तक कि न्यायालयों में अपराधी यह कहते हुए पाए गए हैं कि यह दोष उनका नहीं बल्कि उनके जीन का ही है। क्या भविष्य में न्यायाधीशों को सजा सुनाने से पहले अपराधी के आनुवांशिक ढाँचे को ध्यान में रखना होगा ? मनुष्य हमेशा तर्क–वितर्क के घेरे में रहा है कि उसके व्यक्तित्व के गठन में आनुवांशिक तत्वों का कितना हिस्सा है और जिसमें यह पलता है उस पर्यावरण का कितना। लेकिन जैसे–जैसे विभिन्न जीनोम परियोजनाओं के परिणाम उपलब्ध होते जा रहे हैं, यह अधिक स्पष्ट होने लगा है कि जीन तथा पर्यावरण का सन्तुलन मनुष्य के व्यक्तित्व का गठन करने में बड़ा महत्व रखता है।

दिनांक 26 जुलाई 2000 को अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिंटन तथा ब्रिटेन क प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर ने मनुष्य के जीनों के सम्पूर्ण पंक्तिक्रम का कार्य पूर्ण होने का एलान किया। निस्सन्देह यह एक बहुत ही अद्भुत उपलब्धि है। क्लिन्टन ने कहा, "यह जीवन कुण्डली का एक बहुत ही महत्वपूर्ण तथा अनोखा नक्शा है जो मनुष्य के द्वारा इसके पहले कभी नहीं बनाया गया। यह उस भाषा को जानना है जिसके द्वारा ईश्वर ने जीवों की संरचना की।" आनुवांशिकी के क्षेत्र में वैज्ञानिकों तथा चिकित्सकों को अब जो ज्ञान उपलब्ध है उसके आधार पर वे एक नए युग में प्रवेश कर रहे हैं, जिसमें पहली बार चिकित्सा के क्षेत्र में आनुवांशिक बीमारियों को उनके मूल आधार पर ठीक करने के प्रयास किए जा सकते हैं। इनमें कुछ बहुत ही खतरनाक तथा कष्टदायी बीमारियाँ, जैसे अलजाइमर्स, सीजोफ्रेनिया, हंन्टिग्टन और कैन्सर आदि सम्मिलित हैं। वैज्ञानिकों ने इस ओर विभिन्न देशों और जातियों के लोगों के जीनों की जाँच पड़ताल करना प्रारम्भ किया है।

लोगों की धारणा है कि हमारा अपना जीन अपनी व्यक्तिगत धरोहर है। लेकिन इसे आसानी से पढ़ा जा सकता है : इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मानव जीनोम की गोपनीयता हरेक मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण है। डर इस बात का भी है कि इससे उपलब्ध परिणामों का दुरुपयोग हो सकता है। इस दुरुपयोग से बचने के लिए एक कानूनी ढांचा बनाना बहुत जरूरी हो गया है। आइए देखते हैं कि मानव जीनोम वास्तव में है क्या ?

मानव जीनोम क्या है ?

हमारा शरीर हजारों–लाखों जीवित इकाइयों का बना हुआ है जिन्हें हम कोशिकाओं के नाम से जानते हैं। प्रत्येक कोशिका इतनी सूक्ष्म होती है कि हम उसे केवल आँख से नहीं देख सकते। उसे देखने के लिए हमें माइक्रोस्कोप का सहारा लेना पड़ता है। हमारे शरीर में कुल मिलाकर लगभग 1000 अरब कोशिकाएं होती हैं। प्रत्येक कोशिका के अन्दर एक केन्द्रक होता है। (खून की लाल कोशिका और प्लेटलेट को छोड़कर)। प्रत्येक केन्द्रक के अन्दर धागे के आकार की संरचना होती है जिसे गुणसूत्र कहते हैं। प्रत्येक केंद्रक में 46 गुणसूत्र होते हैं। इसमें से 23 गुणसूत्र पिता से (शुक्राणु के द्वारा तथा 23 गुणसूत्र माता से (डिम्ब के द्वारा)) आते हैं। ये गुणसूत्र प्रोटीन तथा न्यूक्लिक अम्ल से मिलकर बने होते हैं। इस न्यूक्लिक अम्ल को डी.एन.ए. (डिआक्सीराइबो न्यूक्लीक एसिड) कहते हैं। न्यूक्लिक अम्ल की बुनियादी संरचनात्मक इकाई को न्यूक्लियोटाइड कहते हैं। अगर एक केन्द्रक के प्रत्येक गुणसूत्र का डी.एन.ए. निकाल कर एक दूसरे से जोड़ दिया जाए तो वह 6 फुट लम्बा होगा। हर बार जब एक कोशिका का विभाजन होकर दो कोशिकाएं बनती हैं तो उसमें स्थित जीनोम भी दुगुना हो जाता है। कोशिका के विभाजन होते समय डी.एन.ए. के दोनों तंतु अलग हो जाते हैं और प्रत्येक तंतु से एक नया संपूरक तंतु, न्युक्लियोटाइड पेयरिंग (या बेस पेयरिंग) के नियम के पालन से बनता है। अतः प्रत्येक नई कोशिका के डी.एन.ए. में एक नया तंतु होता है और एक पुराना। पेयरिंग बेस के नियम के पालन से जो नया डी.एन.ए. तंतु बनता है वह पुराने तंतु की बिल्कुल हू–ब–हू प्रतिलिपि होता है। डी.एन.ए. 4 मूल बेसों का बना होता है जो क्रमशः A (ऐडिनीन), T (थाइमिन), G (ग्वानिन) तथा C (साइटोसिन) हैं। डी.एन.ए. के एक तंतु का A दूसरे तंतु के T से तथा एक तंतु का G दूसरे तंतु के C से जुड़ा रहता है। डी.एन.ए. का एक तंतु एक दूसरे का संपूरक होता है। इसलिए यदि डी.एन.ए. के एक तंतु के अनुक्रम का पता हो तो दूसरे तंतु में उनका अनुक्रम हम बता सकते हैं। डी.एन.ए. के तंतु में ये बेस जिस अनुक्रम में होते हैं वही उस डी.एन.ए. के कार्य का निर्धारण करता है। डी.एन.ए. का छोटा सा टुकड़ा जो कोशिका के एक कार्य को सम्पन्न करता है उसे जीन कहते हैं। जीन से आर.एन.ए. बनता है और आर.एन.ए. से प्रोटीन, जो कोशिका के किसी विशेष कार्य का सम्पादन करती है। कुछ जीनों का कार्य उनसे बनने वाले आर.एन.ए. से ही होता है, उनसे प्रोटीन नहीं बनते। ऐसा अनुमान है कि करीब 100,000 से लेकर 150,000 तक जीन प्रत्येक कोशिका में हैं जो हमारे शरीर के सभी कार्यों को सम्पन्न करने में सक्षम

हैं। लेकिन ऐसे जीन कोशिका में मौजूद डी.एन.ए. का केवल लगभग 3 प्रतिशत ही होते हैं। शेष 97 प्रतिशत डी.एन.ए. को वैज्ञानिक 'जंक' या बेकार डी.एन.ए. कहते हैं, जिसका सही कार्य आज भी वैज्ञानिकों को पता नहीं है। औसतन मनुष्य के प्रत्येक गुणसूत्र में लगभग 130,000,000 बेस पेयर होते हैं। मनुष्य के पूरे जीनोम में 3,000,000,000 (300 करोड़) बेस पेयर पाए जाते हैं। प्रत्येक कोशिका के गुणसूत्र में मौजूद डी.एन.ए. के चार बेसों के अनुक्रम का पता लगाना ही 'मानव जीनोम प्रोजेक्ट' का मुख्य उद्देश्य था जिसके पूर्ण होने का ऐलान 26 जून 2002 को किया गया।

आज हम मनुष्य की सम्पूर्ण आनुवांशिक कूटसंहिता को पढ़ने में समर्थ हो गए हैं। लेकिन यह इतना आसान कार्य नहीं है। शुरु से अंत तक केवल A, T, G और C के भिन्न अनुक्रम से बनी हुई यह कूटसंहिता यदि लिखी जाए तो 200 से अधिक टेलीफोन सूचियां भर जाएंगी। अभी तक यह गलतफहमी थी कि जब जीनोम अनुक्रम खोजने का कार्य पूरा हो जाएगा तक हमें इसका भी संपूर्ण ज्ञान हो जाएगा कि हम कौन हैं ? हम, क्यों बीमार होते हैं और क्यों बूढ़े होते हैं ? लेकिन मानव जीनोम पूरा होने के बावजूद हम इस ज्ञान से अभी वर्षों दूर हैं।

मानव जीनोम और औषधि विज्ञान का भविष्य

वास्तव में जीनोम परियोजना के कारण आनुवांशिक क्षेत्र में एक नई क्रान्ति आई। चिकित्सकों को दिन प्रतिदिन मरीजों की जांच तथा उनके रोगों के निदान के लिए आनुवांशिक जानकारी आवश्यक होती जा रही है। औषधियों का स्वरूप भी भविष्य में व्यक्तिगत आधार पर निर्धारित होने वाला है। यह जरूरी नहीं कि एक औषधि विशेष हरेक व्यक्ति के लिए समान परिणामकारी हो तथा उसकी मात्रा हरेक व्यक्ति के लिए समान हो। दवाइयों के दुष्परिणाम भी हरेक व्यक्ति के लिए अलग अलग होते हैं। लेकिन दुख की बात है कि हमारे चिकित्सकों की शिक्षा की वर्तमान प्रणाली उनको इस नए विज्ञान के लिए पर्याप्त रूप से तैयार नहीं करती।

किसी बीमारी का कारण यदि कोई जीन हो तो उस जीन के आधार पर यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि आगे चलकर किनको उस बीमारी का खतरा है, तथा वे कौन हैं जिनकी संतानें इस बीमारी का शिकार हो सकती हैं। इतना ही नहीं, यह भविष्यवाणी किसी बच्चे के जन्म से पहले भी की जा सकती है।

हरेक मनुष्य में डी.एन.ए. अनुक्रमण का 99.9 प्रतिशत भाग एक जैसा ही होता है। केवल 0.1 प्रतिशत भाग व्यक्ति विशेष होता है जो एक दूसरे में विविधता का आधार है। इसके अतिरिक्त सभी लोगों में कम से कम 5 से 50 जीनों तक में त्रुटियां होती हैं जो मौके के अनुसार घातक सिद्ध हो सकती हैं।

अगली शताब्दी में बीमारियों की रोकथाम

ऐसे जीन का पता लगने से, जिसके कारण मनुष्य में कुछ बीमारियों के होने की संभावना बढ़ जाती है, भविष्य में बीमारियों की जांच तथा निदान के तरीकों में भारी परिवर्तन आएगा। बीस–पचीस वर्ष बाद शायद यह भी संभव हो जाएगा कि लोग एक नवजात बच्चे का डी.एन.ए. लेकर हृदय रोग, कैन्सर, आटोइम्यून या मेटाबालिक जैसी बहुत सारी बीमारियों का विश्लेषण कर सकेंगे। प्रत्येक खराब जीन के लिए निदान के तरीके उपलब्ध होंगे जो खराब जीन की कमियों को पूरा करेंगे। इस तरह दवा का उपयोग केवल बीमार हुए मरीजों को ठीक करने के बजाय लोगों को बीमार होने से बचाने के लिए तथा उनको स्वस्थ रखने के लिए किया जाएगा। निदान के इस तरीके से लोग स्वास्थ्य व बुद्धिमता से ओतप्रोत होकर साधारण जीवन बिता सकेंगे। अतः कुछ वर्ष बाद लोगों के डी.एन.ए. के जांच के आधार पर चिकित्सक बहुत सारी सम्भावित हालतों की, जिनसे उन्हें स्वास्थ्य का खतरा होगा, एक सूची बना सकेंगे। इन उपायों को अपनाने, चिकित्सक से बीच बीच में जांच कराते रहने तथा उनकी दी हुई सलाह के अनुसार खान पान और रहन सहन का पालन करते रहने से आगे होने वाली बीमारियों के खतरे बहुत कम हो सकेंगे। यह प्रक्रिया वास्तव में रोगों के रोकथाम का असली निदान होगा, जो व्यक्ति के निजी जीन टाइप के आधार पर संभव होगा। आज से 100 वर्ष बाद चिकित्सा का क्या स्वरूप होगा ? शायद एक ही

भविष्यवाणी ऐसी है जो सच हो सकती है, वह है अनहोनी होने की संभावना। निरंतर प्रगति करते हुए जैव प्रौद्योगिकी उद्योग को देखते हुए ऐसा लगता है कि आज जो असम्भव है वह कल की औषधि और निदान की वास्तविकता बन जाएगी।

मानव जीनोम के आधार पर भावी वैज्ञानिक क्या कर सकेंगे ?

जिस तरह एक अच्छा कलाकार प्रकृति को देखकर उसकी अव्यक्त खूबियों को जो औरों को स्पष्ट दिखाई नहीं देतीं एक बहुत ही खूबसूरत वस्तु में संरचित कर देता है, उसी तरह वैज्ञानिक को भी इस योग्य बनना पड़ेगा कि डी.एन.ए. अनुक्रमण को देखकर ही उससे बनने वाली प्रोटीन के कार्य का पता लगा सके और उस जानकारी के आधार पर नई औषधियों का आविष्कार कर सके। यही नहीं, शीघ्रातिशीघ्र डी.एन.ए. अनुक्रमण के जरिए बने हुए प्रोटीनों के कार्य को समझने, उनका बीमारियों से संबंध जांच लेने और उसके अनुसार अंततः नई औषधियों की खोज करने की तरफ भी अग्रसर हो सके।

मानव जीनोम द्वारा 100,000 से 150,000 तक बनने वाली प्रोटीन के कार्यों का पता लगाने से बहुत सारी समस्याओं का हल ढूंढना सम्भव हो सकेगा, जिससे निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देना आसान हो जाएगा।

1. एक कोशिका से किस प्रकार एक संपूर्ण मनुष्य बनता है ?

2. हमारा मस्तिष्क किस तरह काम करता है ?

3. एक मनुष्य एक दूसरे मनुष्य से इतना भिन्न क्यों है ?

4. किस खास जीन की विभिन्नंता और विशेष वातावरण के प्रभाव से विभिन्न लोगों के अलग अलग तरह की बीमारियों का शिकार होने की संभावना बढ़ती है ?

मानव जीनोम के उपरान्त

मानव जीनोम अनुक्रमण का काम पूर्ण होना हमारे लिए उस पुस्तकालय के प्रवेश द्वार तक पहुंचने के समान है जिसकी विभिन्न पुस्तकों में 3,000,000,000 (300 करोड़) अक्षर बिखरे पड़े हैं। इन पुस्तकों को पढ़ने के लिए पहले हमें उन अक्षरों को मिलाकर बने हुए शब्दों को पहचानना पड़ेगा और अल्पविराम, अर्द्धविराम तथा पूर्ण विराम लगाकर वाक्य बनाने पड़ेंगे। इस कार्य को पूरा करना सबसे पहला और महत्वपूर्ण कदम है। दूसरा महत्वपूर्ण कदम होगा सभी जीनों के कार्य का पता लगाना। अभी हमें मुश्किल से मात्र एक हजार जीनों के कार्य का पता लगा है। बाकी जीनों के कार्य का पता लगाना एक बहुत बड़ी चुनौती है। तीसरा उतना ही महत्वपूर्ण लेकिन कठिन कदम है उस 97 प्रतिशत डी. एन.ए. के कार्य का पता लगाना जिसको वैज्ञानिक लोग 'जन्क' डी.एन.ए. कहते हैं। इस पर भी एक सीधा सवाल उठाया जा सकता है कि सभी जीन प्रोटीन बनाते हैं जो शरीर के सभी कार्यों को संपन्न करते हैं, और हम सभी में वैसे ही जीन मौजूद हैं तो हम लोग एक दूसरे से इतने भिन्न क्यों हैं ? एक ही जैसे क्यों नहीं हैं ? इसका उत्तर शायद उस 97 प्रतिशत 'जन्क' डी. एन.ए. में होगा, जिसका पता लगाने के लिए हमें जीव विज्ञान के अलावा रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, गणित तथा कम्प्यूटर विज्ञान जैसी अनेक वैज्ञानिक शाखाओं का सहारा लेना पड़ेगा।

जैसा हमने ऊपर कहा, सभी जीनों के कार्य का पता लगाना वैज्ञानिकों के लए एक चुनौती है। इसके लिए निम्नलिखित तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है।

कम्पैरेटिव जीनोमिक्स (जीनोम का तुलनात्मक अध्ययन)

A, T, G और C डी.एन.ए. के चार मूल आधारों के मेल से पृथ्वी पर समस्त जीवों की संरचना हुई है। इसलिए यह बिल्कुल संभव है कि मनुष्य के बहुत सारे जीन बाकी प्राणियों से मिलते जुलते हों। उदाहरण के तौर पर ड्रोसोफिला, चूहा और नेमैटोड आदि जीवों को प्रयोगशालाओं में पालकर उनके जीनों का अध्ययन किया गया है, और उस अध्ययन से जीनों के कार्य के बारे में जानकारी हासिल की गई है। यदि मनुष्य में भी उसकी प्रकार के जीन पाए जाते हों तो निश्चित ही यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि शायद मनुष्य में भी

उन जीनों का वही कार्य होगा जो उक्त जीवों में है। प्रयोगशाला में पलने वाल चूहे की करीब 90 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन मनुष्य में पाई जाने वाली प्रोटीनों से मिलती जुलती है।

फंक्शनल जीनोमिक्स (जीन की कार्य पद्धति का अध्ययन)

पिछले 125–20 सालों में बायोइनफारमैटिक्स नामक एक नया विज्ञान प्रचलित हुआ। जीव विज्ञान, गणित, कम्प्यूटर और इनफारमेशन टेक्नोलॉजी के संकरण से इस विज्ञान का गठन हुआ है। बायोइनफारमैटिक्स द्वारा मानव जीनोम अनुक्रमण का विश्लेषण करके, उससे कौन सी प्रोटीन बनेगी, उसकी क्या संरचना होगी तथा उसके आधार पर उसका क्या कार्य होगा इसका कुछ हद तक पता लगाया जा सकता है। उत्परिवर्तन के द्वारा चूहे के जीन के कार्य में परिवर्तन लाकर या उसके कार्य को बन्द कर तथा प्रायोगिक और कम्प्यूटेशनल के नए तरीके से प्रोटीन का विश्लेषण करके जीनों के कार्य के बारे में बहुत कुछ जाना जा सकता है।

फारमेको जीनोमिक्स (जीन और औषधि विज्ञान)

कुछ औषधियां एक ही बीमारी के लिए कुछ रोगियों के काम आती हैं और कुछ में नहीं। यहां तक कि कई औषधियां कुछ लोगों के लिए विष बन जाती हैं, तो कुछ लोगों में अच्छा असर करती हैं। ऐसा क्यों होता है ? किन आनुवंशिक प्रजाति के लोगों पर एक विशिष्ट औषधि का असर होता है और किन प्रजातियों पर नहीं, यह जानना फारमेको जीनोमिक्स का प्रमुख उद्देश्य है। भविष्य में नई औषधियों की जांच करने के लिए जो स्वयंसेवक चुने जाएंगे उनके चयन का आधार उनका आनुवांशिक ढांचा होगा। इससे औषधि की जांच करने में लगने वाले समय की ही नहीं बल्कि पैसे की भी बचत होगी। आनुवंशिकी शास्त्र और औषधि विज्ञान के सम्मिश्रित उपयोग से हम व्यक्तिनिष्ठ औषधियों के युग में प्रवेश कर रहे हैं।

टॉक्सिको जीनोमिक्स

कुछ रासायनिक पदार्थ तथा औषधियां जीन को हानि पहुंचाती हैं। इसके द्वारा हम केवल डी.एन.ए. के अनुक्रम में आए हुए बदलाव का ही नहीं बल्कि कोशिकाओं में स्थित विभिन्न जीनों की कार्य प्रणाली का नक्शा बनाकर आने वाले बदलाव का भी पता लगा सकते हैं। पर्यावरण के प्रदूषण का असर जिस डी.एन.ए. पर होता हो उस का पता लगाने के लिए यह एक बहुत ही उपयुक्त तरीका है।

प्रोटिओमिक्स (आनुवांशिक प्रोटीनों का विज्ञान)

प्रोटीनें कोशिका के सभी कार्यों को सही ढंग से चलाने, बनाए रखने, और कोशिकाओं से बने जीव को जीवित और सक्रिय रखने के लिए जिम्मेदार होती हैं। हाल में इन कोशिकाओं में किसी खास समय पर बनने वाली हर तरह की प्रोटीनों का अध्ययन एक ही साथ करने की उत्सुकता वैज्ञानिकों में बढ़ गई है। इससे प्रोटीनों के क्षेत्र में एक नई शाखा का जन्म हुआ है जिसे 'प्रोटिओमिक्स' कहते हैं। किसी जीव या कोशिका के जीनोम द्वारा बनने वाली सभी प्रोटीनों को प्रोटिओम कहते हैं। हजारों प्रोटीनों का एक साथ अध्ययन करना अब प्रोटिओमिक्स के नए तरीकों से संभव हो गया है।

माइक्रो अरे/डी.एन.ए. चिप/जीन चिप

आर.एन.ए. का अध्ययन करने के लिए बहुत सारी तकनीक उपलब्ध हैं उनमें से एक है डी.एन.ए. चिप तकनीक, जिसका आविष्कार अमेरिका की एफिमेट्रिक्स नामक एक कम्पनी ने किया है। बहुत ही बड़े स्तर पर जीन की कार्यप्रणाली का और उससे बनी हुई प्रोटीनों का परीक्षण या अध्ययन करने के तरीकों में अब एक महत्वपूर्ण क्रांति आ गई है। जीन चिप्स किसी भी ऊतक में कार्य करने वाली सभी जीनों का प्रतिचित्र हमारे सामने एक ही प्रयोग द्वारा उपलब्ध करा देती हैं। इस तकनीक से कौन सी जीन किस गुण के लिए जिम्मेदार है इसका पता लगाने में भविष्य में बहुत मदद मिलेगी। ये जीन चिप्स दो तरह के होते हैं। एक न्यूक्लियोटाइड अरे और दूसरा सी.डी.एन.ए. अरे।

न्यूक्लियोटाइड अरे

संपूर्ण जीनोम का या किसी भी एक जीन का न्यूक्लियोटाइड अरे बनाया जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि एक जीन दस हजार बेस का बना हुआ है, तो उसके 15–20 न्यूक्लियोटाइड की लंबाई के टुकड़े

अनुक्रम में एक शीशे की स्लाइड पर स्थापित किए जाते हैं। इस पद्धति से पूर्ण जीन को पांच सौ टुकड़ों में बांटा जा सकता है। किसी भी व्यक्ति के लिए हुए डी.एन.ए. को इस चिप में स्थापित डी.एन.ए. के टुकड़ों से तुलना करके उस व्यक्ति के जीन में आया हुआ मात्र एक बेस परिवर्तन भी पहचाना जा सकता है। यह एक बहुत जटिल कार्य है। भविष्य में आनुवंशिक बीमारियों के कारणों का पता लगाने में ऐसे चिप्स वरदान साबित होंगे।

सी.डी.एन.ए. अरे

किसी के ऊतक के लिए हुए मेसेंजर आर.एन.ए. से बने हुए संपूरक डी.एन.ए. को सी.डी.एन.ए. अरे कहा जाता है। इस सी.डी.एन.ए. अरे की मात्रा पी.सी.आर. नाम की तकनीक से बढ़ाई जाती है और उसकी बहुत ही सूक्ष्म मात्रा को शीशे की स्लाइड पर 20 X 20 मिमी0 क्षेत्र में माईक्रोअरेयर द्वारा स्थापित की जाती है जिसे 'माईक्रोस्पॉटिंग' कहते हैं। एक स्लाइड पर कभी कभी छः हजार से अधिक विभिन्न सी.डी.एन.ए. अरे को स्थापित किया जा सकता है। उन सी.डी.एन.ए. अरे से बने हुए मेसेंजर आर.एन.ए. की जांच सामान्य तथा विकृत ऊतकों में करने के बाद ही जीन की कार्यप्रणाली में आए हुए बदलाव का पता लगता है।

माईक्रोअरे का उपयोग अनेक कार्यो के लिए किया जा सकता है जैसे –

– आनुवांशिक बीमारियों का पता लगाने में।

– पैदा होने के पहले ही बच्चा आनुवंशिकीय बीमारियों से रहित है या नहीं इसका पता लगाने में।

– नई दवाओं की खोज करने में।

– फारमेकोजीनोमिक्स और टॉक्सिको जीनोमिक्स के क्षेत्र में।

– वृद्ध और युवा व्यक्ति के जीन की कार्यप्रणाली का अन्तर जानने में।

माईक्रोअरे के और भी बहुत सारे उपयोग हैं जिससे जीन की कार्यप्रणाली के बारे में अधिक जानकारी हासिल की जा सकती है

जीन नाकआउट

किसी भी जीन के कार्य का पता लगाने के लिए पहले उस जीन को एक वेक्टर में क्लोन करके उसे चूहे की इम्ब्रियानिक कोशिका में डाला जाता है। क्लोन किए हुए जीन का समकक्ष जीन जो चूहे के गुणसूत्रों में काम करता है उससे इसका रिकम्बिनेशन (आदान–प्रदान) इस तरह हो जाता है कि चूहे के गुणसूत्रों में मौजूद जीन अब अपना कार्य नहीं कर पाता। इस चूहे से पैदा हुए चूहों में कुछ ऐसे भी चूहे होंगें जिनमें यह जीन काम नहीं कर रहा होगा। इस कार्य न करने वाले जीन का असर इन चूहों की शारीरिक बनावट तथा उनकी प्रत्येक कोशिका में होने वाले कार्यो पर पड़ सकता है, जिसका पता आसानी से लग जाता है। इंस तरह के जीन के काम का पता लगाने में काम आने वाली इस तकनीक को 'जीन नाकआउट' कहते हैं।

मनुष्य की बीमारियों का ट्रान्सजेनिक एनिमल माडल

मानव जीनोम का अंतिम उद्देश्य है मनुष्य को आनुवंशिकीय तथा संक्रामक बीमारियों से उत्पन्न महान कष्ट से छुटकारा दिलवाना। इसके लिए नई दवाइयों की खोज आवश्यक है। ट्रान्सजेनिक एनिमल माडल का इसके लिए बड़ा महत्व है। ट्रान्सजेनिक एनिमल माडल बनाने के लिए किसी खराब जीन को-जेनेटिक इंजीनियरिंग और ट्रान्सजेनिक तकनीक के द्वारा चूहे के जीनोम में डालकर उसी बीमारी को चूहे में पैदा किया जा सकता है। ऐसे चूहे पर नई औषधियों के शोध के लिए सिन्थेटिक तथा वनस्पतियों से निकाली हुई औषधियों का असर परखा जा सकता है। इन औषधियों का अंत में मनुष्य के लिए इस्तेमाल हो सकता है। इस तरह नई औषधि के शोध में या संक्रामक बीमारी के संदर्भ में 'एनिमल माडल' बहुत ही उपयोगी है।

चिम्पैन्जी जीनोम परियोजना की आवश्यकता

मनुष्य और चिम्पैन्जी में करीब 99 प्रतिशत जीन एक जैसे हैं। केवल 1 प्रतिशत जीन ही अलग हैं। इसलिए यह तर्क लगाया जा रहा है कि यदि चिम्पैंजी के पूरे जीनोम का अनुक्रम मालूम किया जाए तो हमें उस 1 प्रतिशत जीन के बारे में भी जानकारी मिल जाने की उम्मीद है, जिनकी वजह से मनुष्य, मनुष्य है। मनुष्य

की उत्क्रांति कैसे हुई, यह एक बहुत ही बड़ा प्रश्न है और इसका उत्तर ढूंढना विज्ञान के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है।

कुछ बीमारियां हैं जो मनुष्य में होती हैं लेकिन चिम्पैंजी में नहीं, और कुछ ऐसी हैं जो चिम्पैन्जी में होती हैं लेकिन मनुष्य में नहीं। उदाहरण के लिए एच.आई.वी. या मलेरिया जैसी संक्रामक बीमारियां चिम्पैन्जी मे लिए घातक नहीं होतीं लेकिन मनुष्य के लिए हैं। चिम्पैन्जी मलेरिया के लिए क्यों प्रतिरोधी होता है ? अगर इसके कारण का पता हम लगा सकें तो ऐसी बीमारियों का इलाज ढूंढना आसान हो जाएगा। इसीलिए चिम्पैन्जी जीनोम अनुक्रमण परियोजना की आवश्यकता है।

क्या सबका मूलमंत्र जीनोम ही है ?

बीमारियों के विषय में, मनुष्य के व्यक्तित्व के बनने में तथा उसके व्यवहार और आचरण के बारे में हमारा ज्ञान जैसे–जैसे बढ़ता जा रहा है, यह स्पष्ट होता जा रहा है कि वातावरण का तथा रहन सहन के तरीके का भी उस पर कहीं अधिक प्रभाव पड़ता है, जितना कि पहले अंदाज नहीं था। कैन्सर और बुद्धिमत्ता इसके सबसे बड़े उदाहरण हैं। वैज्ञानिकों ने यह दिखाया है कि आनुवंशिक स्तर पर एक ही जैसे चूहे (चूहों के क्लोन) भिन्न वातावरण में पलने पर अलग–अलग चलन दिखाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि कुछ गुणों का विकास होने में वातावरण बहुत बड़ा असर डालता है। लेकिन इस बात को ध्यान में रखना पड़ेगा कि भले ही हम बहुत सारे ऐसे जीनों की पहचान करने में समर्थ हो सकते हैं जिनकी वजह से मनुष्य में कुछ बीमारियों की संभावना बढ़ जाती है, फिर भी वास्तव में यह बीमारी की पूरी कहानी नहीं है। हमें यह मानना पड़ेगा कि आनुवंशिकी और वातावरण का जो तालमेल है, जिससे मनुष्य के व्यक्तित्व, चाल चलन तथा व्यवहार जैसे गुणों का विकास होता है, बहुत ही जटिल है। इसको समझने के लिए केवल जीनोम का ज्ञान काफी नहीं है। आनुवंशिकता और पर्यावरण के रिश्तों को और उनके तालमेल को पूर्णतया समझने में बहुत समय लगेगा।

एक तरफ तो ऐसा लगता है कि मनुष्य के जीनोम के अनुक्रमण की जानकारी तथा उसका अध्ययन मनुष्य की शारीरिक पीड़ाओं को दूर करने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है, वहीं दूसरी तरफ इस जानकारी के खतरे भी दिखाई देते हैं। ज्ञान आखिर ज्ञान होता है। बिना सदुपयोग के कोई उसका महत्व नहीं रह जाता। यह अब मनुष्य पर निर्भर है कि उस ज्ञान से होने वाले लाभ पर पूर्ण ध्यान देकर उसे बढ़ाएं तथा खतरे को हटा दें। वैज्ञानिक खोज से मनुष्य के बढ़ते हुए ज्ञान और ताकत के साथ–साथ अपने और भविष्य की पीढ़ियों के भवितव्य की जिम्मेवारी का भी एहसास होना जरूरी है। हमारा जीनोम हमारे पूर्वजों की धरोहर है जो लाखों वर्षों से सुरक्षित चला आ रहा है। इसे भविष्य की पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखने के लिए अपने पर्यावरण को प्रदूषण से बचाना होगा तथा प्रकृति के साथ तालमेल रखकर जीना सीखना होगा। बहुत सारे जीव इस पृथ्वी पर पैदा हुए और लुप्त हो गए और आज भी लुप्त हो रहे हैं, हमें उन्हें बचाना होगा और कोई ऐसा कार्य करने से बचना होगा जिसमें मनुष्य जाति के ही लुप्त हो जाने का खतरा हो।

प्रो० निगम हमारे सहयोगी रहे हैं। वे अकार्बनिक रसायन के उच्च कोटि के विद्वान हैं और हँसमुख प्रवृत्ति उनकी विशेषता है।

– प्रो० आर.पी. रस्तोगी
पूर्व कुलपति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

*****

प्रो० निगम की स्पष्टवादिता, तार्किक चिन्तन तथा अपनी बात को कहने की धीर–गम्भीर शैली का मैं कायल हूँ। उनके साथ मित्रता का मैं बहुत सम्मान करता हूँ।

– डॉ० नित्यानंद
पूर्व निदेशक
केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

नैनोसाइंस व नैनोटेक्नोलाजी

प्रो0 जी.के. मेहता

लेखक संप्रति इलाहाबाद विश्वविद्यालय के कुलपति हैं।

नैनोसाइंस

नैनोसाइंस क्या है ? नैनो शब्द ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है बौना (ड्वार्फ)। अब से 2500 वर्ष पूर्व पहले ग्रीक दार्शनिकों ने यह सोचना आरम्भ किया कि पदार्थ कैसे बना है ? यदि किसी वस्तु को टुकड़ों में विभाजित करना चाहें तो कितने छोटे भाग कर सकते हैं ? इसकी क्या कोई सीमा है ? वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इसकी सीमा परमाणु (एटम) है जिसके भाग नहीं किए जा सकते। उस समय यदि वैज्ञानिक इस सोच में शामिल होते तो शायद वह यह प्रश्न उठाते कि जब किसी पदार्थ के टुकड़े कर रहे हैं तो उनके टुकड़ों का गुण क्या वही है जो कि मूल पदार्थ का था। यदि यह प्रश्न उस समय उठाया जाता तब सम्भव है कि नैनोसाइंस का आविष्कार तभी हो जाता। उसके उपरान्त वैज्ञानिक अनुसंधान इस दिशा में प्रारम्भ हुआ कि परमाणु (एटम) के अन्दर क्या है ? वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया कि यह अविभाजित नहीं है, उसकी एक संरचन्ग है। उसके अन्दर नाभिक है जिसके आस पास इलेक्ट्रान चक्कर लगाते हैं। इसके उपरान्त यह भी पता चला कि नाभिक को भी विभाजित किया जा सकता है जिसके द्वारा हमें परमाणु ऊर्जा का लाभ मिल सका। नाभिकीय विज्ञान में खोजों के कारण परमाणु ऊर्जा के अतिरिक्त और बहुत सी तकनीक अभी विकसित हो रही है और इसको हम लोग फेम्टोसांइस की संज्ञा दे सकते हैं। फेम्टो नैनो से दस लाख गुना छोटा होता है। अभी यह खोज आगे जारी है और यह पता लगाने का प्रयत्न हो रहा है कि आखिरकार पदार्थ किस सूक्ष्मतम कणों (एलिमेंट्री पार्टिकल्स) का बना हुआ है और कौन से ऐसे बल (फोर्सेस) हैं जो पदार्थों को अपना रूप देते हैं। इस तरह के शोध कार्य से आगे जाकर क्या सम्भावनाएँ बनेंगी कहना कठिन है परन्तु वैज्ञानिक सर्वदा नई दिशाएँ दिखाते हैं।

नैनोसाइंस की संभावना 1959 में भौतिक विज्ञान के नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो0 फाइनमैन के एक भाषण से उजागर हुई थी। इसका सार यह है कि जब परमाणु आपस में मिल कर पदार्थ बनाते हैं तब यदि किसी प्रकार यह सम्भव हो कि जब कुछ परमाणु मिलकर एक गुच्छा (क्लस्टर्स) बना लें उसके बाद और परमाणु को इस गुच्छ में न जुड़ने दें तब जो पदार्थ बनेगा उसका गुण साधारण पदार्थ से बिल्कुल भिन्न होगा। इन गुच्छों (क्लस्टर्स) को हम नैनोपार्टिकल कहते हैं। उदाहरण के लिए यदि ताँबे को देखा जाए जिसका गलनांक 200 डिग्री से अधिक होता है तो वही ताँबा यदि नैनोपार्टिकल से बनाया जाए तब उसका गलनांक 25 डिग्री के लगभग हो सकता है। इसका गलनांक क्या होगा यह निर्भर करेगा कि नैनोपार्टिकल्स कितने एटम्स से मिलकर बने हैं। यदि हम ऐसी तकनीक विकसित करलें जिससे इस पर नियंत्रण किया जा सके कि नैनोताम्बे के अन्दर जो गुच्छे बने हों उसमें निश्चित मात्रा में ही परमाणु हों तब हम नैनोताँबे का गलनांक आसानी से बदल सकते

हैं। यह सिर्फ एक उदाहरण है परन्तु इसमें नैनोसांइस की असंख्य संभावनाओं का अन्दाज लगाया जा सकता है। इससे एक नई दिशा निकल रही है जिसके द्वारा हम लोग जिस तरह का पदार्थ बनाना चाहें बना सकेंगे।

नैनोटेक्नोलाजी

नैनोटेक्नोलाजी क्या है ? टेक्नोलाजी भी ग्रीक शब्द है। टेक्ने का अर्थ कुछ बनाने की कला या दक्षता और लोज़िस अर्थात् बनाने का ज्ञान। अर्थात् टेक्नोलाजी शब्द का अर्थ है कुछ बनाने का ज्ञान होना। नैनोटेक्नोलाजी, नैनोसांइस में शोध से उत्पन्न ज्ञान को उपयोगी बनाने का माध्यम है।

इस तरह के यन्त्र उपलब्ध हैं जिससे यह सम्भव है कि हमलोग एक एक एटम को उठा कर जहाँ चाहें रख सकते हैं। इस यंत्र का नाम है स्केनिंग ट्नलिंग माइक्रोस्कोप (एस.टी.एम.)। इसका उपयोग करके हम एक–एक एटम को अपनी जगह बैठा कर मन चाहे पदार्थों का निर्माण कर सकते हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि पदार्थ को बनाने में जितने एटम्स लगते हैं उसके लिए इस तरह उसे बनाने में सदियाँ लग जाएँगी। इसके माने यह नहीं है कि यह सम्भव नहीं है। अपने पास अभी जो तकनीक है उससे यह सम्भव नहीं लगता है। यह एक चुनौती है कि ऐसी तकनीक विकसित करें जिससे यह सम्भव हो सके। इस दिशा में काफी उन्नति हो चुकी है और होगी। रसायन विज्ञान के द्वारा मोलिक्यूल्स को इस तरह से ढाला जा सकता है कि नैनो मटेरियल्स बन सके। इसको मोलिक्यूलर टेक्नोलाजी कहा जा सकता है। यदि हम प्रकृति पर जरा गौर करें तो हमें आभास होगा कि पेड़ पौधे जिस तरह पदार्थ बनाते हैं वह मालिक्यूलर टेक्नोलाजी ही है। पेड़ पौधे वातावरण से आक्सीजन लेते हैं, पृथ्वी से पानी व कुछ धातुएँ और मोलिक्यूलर टेक्नोलाजी का प्रयोग करते हुए अपना तना, पत्ते, फूल का निर्माण करते हैं। वैज्ञानिक प्रकृति का एक ज्वलन्त उदाहरण मैं यहाँ देना चाहूँगा। यह अच्छी तरह से ज्ञात है कि पेड़ पौधे जमीन से धातु खींच लेते हैं। इस प्रक्रिया पर शोध करते हुए अमेरिका के टेक्साज़ विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि अल्फाल्फा का पौधा सोने के नैनोपार्टिकल्स खींच सकता है। सोने को धरती से निकालने में इसका क्या योगदान होगा कहना मुश्किल है परन्तु उल्लेखनीय खोज है। यदि इसे पूर्णरूप से समझ लें तो इसका उपयोग करके मटेरियल्स बनाए जा सकते हैं।

शरीर के अन्दर मोलिक्यूलर टेक्नोलाजी से जितने कार्य होते हैं उसके बारे में यदि हम विचार करें तो हम लोग अचम्भित हो जाएँगे। अब धीरे धीरे विज्ञान इस दिशा में उन्नति कर रहा है और अब सभी वैज्ञानिक भौतिकी, रसायन, बायोसाइंस, गणित, कम्प्यूटर विज्ञान आदि अपनी प्रगति के लिए नैनो सांइस की ओर जा रहे हैं।

नैनोट्यूब्स

नैनोसाइंस में कारबन नैनोट्यूब्स, जो कि ग्रेफाइट का एक अभूतपूर्व रूप है की अहम भूमिका है। यह 60 कार्बन परमाणु से बना C_{60} अणु जिसे बकीबांल के नाम से जाना जाता है, से बनती है। यह षटभुजाकार (हेक्सागोनल) C_{60} यदि ट्यूब में एक सीधी रेखा में रखें जाए ता यह धातु जैसी होती है और संवाहक (कण्डक्टिंग) गुण वाली होती है। यदि यह षटभुजों की रेखा कुंडलिनी (हेलिक्स) बनाती है तो यह अर्द्धचालक (सेमी कण्डक्टर) जैस गुण धारण कर लेती है। होलेण्ड के डेल्फट विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने यह दर्शाया है कि एक नैनोट्यूब ट्रांजिस्टर जैसे काम कर सकती है। नैनोट्यूब का सीधा हिस्सा जब हेलिक्स वाले हिस्से से मिलता है तब वह एक डायोड जैसा काम कर सकता है। यह एक दीवाल वाली नैनोट्यूब (सिंगल वाल्ड नैनोट्यूब एस.डब्ल्यू.एन.टी.) कहलाती है। इसको बनाने की प्रक्रिया अभी बहुत कठिन है परन्तु इसे सरल बनाने के लिए शोध कार्य जारी है। अभी कई दीवालों वाली नैनोट्यूब (मल्टी वाल्ड नैनोट्यूब एम.डब्ल्यू.एन.टी.) जिनकी दिशा बेतुकी (रेण्डम) होती है आसानी से बनाई जा सकती है। इनसे माइक्रोवेव पैदा की जा सकती है जो सेलुलर फोन बनाने में मदद करती है और कई चीजों में यह इस्तेमाल होगी। नैनो इलेक्ट्रानिक में नैनोट्यूब का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान होगा।

नैनोडिवाइसेस

कम्प्यूटर्स दिन–प्रतिदिन छोटे, अधिक शक्तिशाली और सस्ते होते जा रहे है। यह कमाल विज्ञान और सम्बन्धित प्रौद्योगिकी का है। गार्डन मूर ने सन् 1960 मे यह विचार व्यक्त किया था कि इन्टीग्रेटेड सर्किट्स में ट्रांजिस्टर की संख्या हर वर्ष दुगुनी होती जाएगी जिससे मूर्स ला के नाम से जाना जाता है। इस समय यह स्थिति है कि एक माइक्रो प्रोसेसर में 4 करोड़ ट्रांजिस्टर होते हैं और मूर्स ला के अनुसार सन् 2002 तक इसमें 5 करोड़ ट्रांजिस्टर हो जाएंगे। अब तक यह कमाल टेक्नोलाजी विकसित करके ही सम्भव हुआ है। अब इस प्रश्न पर विचार किया जा रहा है कि क्या इसकी कोई सीमा है ? ट्रांजिस्टर की साइज छोटी होती जा रही है। एक सीमा के बाद जो सिलिकान चिप का भाग एक ट्रांजिस्टर के लिए इस्तेमाल होगा वह नैनोक्रिस्टल का होगा। नैनोक्रिस्टल के गुण सिलिकॉन से बिल्कुल भिन्न होंगे। इसमें क्वान्टम प्रभावों का सामना करना पड़ेगा जिसमें इलेक्ट्रान एक ट्रांजिस्टर से दूसरे ट्रांजिस्टर में आसानी से टनेल कर जाएगा जिसको तकनीकी भाषा में शार्ट सर्किट कहा जाएगा। यह एक चुनौती है जिसका सामना करने में वैज्ञानिक जुटे हुए हैं। एक प्रश्न यह पूछा जा रहा है कि ट्रांजिस्टर बनाने के लिए सिलिकॉन को छोड़कर कोई दूसरा पदार्थ इस्तेमाल करने के विषय में सोचना अनिवार्य है। शायद यह सुनकर आपको आश्चर्य होगा कि एक प्रयोगशाला में प्रयोग हो रहे हैं कि सिलिकॉन के बजाय पालक को इस्तेमाल किया जा सकता है। पालक का मतलब पालक की पत्तियों से नहीं बल्कि पालक में जो प्रोटीन होती है उससे मालीक्यूलर ट्रांजिस्टर बनाना संभव है। पुणे के अगरकर शोध संस्थान के वैज्ञानिकों ने केडमियम सल्फाइड के नैनोपार्टिकल्स माइक्रोब द्वारा रासायनिक तरीके से बनाकर इलेक्ट्रानिक डायोड बनाया है।

नैनोमेडिसिन

नैनोसाइंस में स्वास्थ्य की दिशा में बहुत काम हुआ है और नए आयाम सामने आ रहे हैं। इसमें बीमारी की पहचान, नियंत्रण और निदान की ओर ध्यान दिया जा रहा है।

मनुष्य ने हमेशा उन जानवरों को खत्म करने का प्रयत्न किया है जो उन पर आक्रमण करते हैं। धीरे धीरे ऐसे जानवर अब सिर्फ चिड़ियाघर में दिखाई पड़ते हैं अब नैनोटेक्नोलाजी द्वारा मनुष्य के दुश्मन वाइरस, बैक्टीरिया आदि को समाप्त करने के लिए नैनोयंत्रों का विकास किया जा रहा है जिससे इन पर न केवल नियंत्रण किया जा सके बल्कि इन्हें समाप्त कर दिया जाए। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत कार्य हुआ है। अभी भी यह सम्भव नहीं कि ऊतक (टिश्यूज़) को जोड़ा जा सके। नैनोटेक्नोलाजी के द्वारा यह सम्भव हो सकता है।

बीमारी की स्थिति में मनुष्य को दवा की अपने शरीर के रोगयुक्त स्थान पर आवश्यकता होती है वहाँ दवा सीधे पहुँचाना भी नैनोसाइंस द्वारा सम्भव है। आजकल जो दवाएँ उपलब्ध हैं वह पूरे शरीर में फैल जाती हैं जहाँ उनकी कोई आवश्यकता नहीं है। उनका साइड इफेक्ट शरीर के अन्य भागों में होता है जो हानिकारक है। जैसे सिर दर्द को ठीक करने के लिए दवा दी जाती है व दिमाग के सेल्स को प्रभावित करने के लिए ही दी जाती है परन्तु वह समस्त शरीर में फैल जाती है जिसमें कुछ हानि भी हो सकती है। अब यह सम्भव हो जाएगा कि दवा में नैनोपार्टिकल्स लगा देंगे जो ब्रेन सेल्स में जाकर काम करेगी। इस तरह की प्रक्रिया जिसे नैनोपार्टिकल्स टेगिंग कहा जाता है उससे कैंसर जैसी बीमारी की जल्दी से जल्दी पहचान करने में भी मदद मिलेगी। कैन्सर पर काफी नियंत्रण हो चुका है। इसकी जल्दी पहचान होने से और नैनोमेडिसिन की प्रक्रिया द्वारा इसको पूरी तरह समाप्त करने की सम्भावना है।

उभरती सम्भावनाएँ

नैनोसाइंस और नैनोटेक्नोलाजी के कई प्रयोग धीरे–धीरे उपलब्ध हो रहे हैं और आगे असंख्य संभावनाएँ हैं जिनको कार्यरूप देना एक चुनौती है जिसमें आजकल पूरे संसार में वैज्ञानिक आकर्षित हो रहे हैं। कुछ उदाहरण निम्न हैं :

एक भारतीय वैज्ञानिक ने अमेरिका में नैनोफास्फर का आविष्कार किया है। यह इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुराछात्र हैं। इन्होंने यह दिखा दिया कि नैनोफास्फर को माइक्रोचैनल प्लेट्स में भरकर एक्स–रे कैमरा के लिए प्रयोग किया जा सकता है जिसकी विभेदन सीमा (रिजोल्यूशन) कई गुना अच्छी होगी और इसमें एक्स–रे डोज बहुत कम लगेगा। नैनोफास्फर बनाने की प्रक्रिया एक खास तरह से एटम को एक छोटे से नैनो क्रिस्टल पिंजड़े में सीमित कर दिया जाता है। इसको टेक्निकल भाषा में क्वाण्टम कन्फाइंड एटम्स (क्यू.सी.ए.) कहा जाता है। इसको इस्तेमाल करके सस्ते लैम्प्स, फ्लैट पैनल डिस्प्ले आदि भी बनाए जा सकते हैं।

पोलिमर में नैनोपार्टिकल्स की कुछ मात्रा मिलाकर उसके गुणों में तरह तरह के परिवर्तन करके उसे और उपयोगी बनाने की दिशा में बहुत शोध कार्य हुआ है। इससे सूर्य से जो किरणें आती हैं जिसमें पराबैंगनी (अल्ट्रावाइलेट) हिस्सा हानिकारक होता है उसे बदल कर दृश्यमान किरणों (विजिबल रेडिएशन) में परिवर्तित किया जा सकता है। इससे सूर्य से बिजली उत्पादन करने के जो प्रयत्न सौर सेल (सोलर सेल) द्वारा हो रहे हैं में बहुत मदद मिलेगी।

नैनोमैटेरियल्स में जो क्वान्टम प्रक्रियाएँ (क्वांटम इफेक्ट्स) होती हैं उन्हें इस्तेमाल करके पदार्थों की संचालकता (कंडक्टिविटी), सामर्थ्य (स्ट्रेंग्थ) एवं चुम्बकीय गुण (मैग्नेटिक प्रापर्टीज़) आदि में अभूतपूर्व परिवर्तन किए जा रहे हैं।

दक्षिण कोरिया की एक प्रयोगशाला में शोध द्वारा यह तथ्य सामने आया है कि जब किसी घोल (शॅलुशन) को हम और द्रव मिलाकर उसकी सान्द्रता (डाइल्यूशन) कम करते हैं तब उसमें मोलिक्यूल्स के बीच की दूरियाँ बढ़ती जाती हैं। यह सबको अच्छी तरह ज्ञात है। परन्तु शोध कार्य के दौरान यह पाया गया कि सांद्रता (डाइल्यूशन) कम करने की एक सीमा के बाद कुछ मोलिक्यूल्स पास आकर गुच्छे बनाने लगते हैं, यानि नैनोपार्टिकल्स बनाने लगते हैं। हो सकता है कि यह तथ्य आगे जाकर होम्योपैथी कैसे काम करती है पर कुछ प्रकाश डाले।

पत्तियों में परावर्तित (रिफ्लेक्टेड) किरणों द्वारा एक मीटर दूरी तक स्थित पौधे महसूस (डिटेक्ट) कर सकते हैं। यह प्राकृतिक परिचारक पद्धति (नेचुरल डिटेक्शन सिस्टम) को इस्तेमाल काने का प्रयोग पीटर क्येल और उनके सहयोगियों ने अमेरिका के बरकले विश्वविद्यालय में किया है। उन्होनें देखा कि लाल किरणें ईस्ट कोशिका (सेल) पर पड़ने पर वह नीला रंग धारण कर लेते हैं और जब उन पर अवरक्त किरणों का गुच्छा (इन्फ्रारेड बर्स्ट) पड़ता है तक वह अपने प्राकृतिक रंग पर आ जाते हैं। यह प्रयोग इस सम्भावना पर इशारा करता है कि वैज्ञानिक अपने शोध कार्य में जीन्स को एक बल्ब की तरह जला व बुझा सकेंगे।

प्रो0 निगम से मेरी पिछले 50 वर्षों से मित्रता है। उनकी विद्वत्ता और आकर्षक व्यक्तित्व का मैं प्रशंसक हूँ।

— डॉ0 देवव्रत बनर्जी, पूर्व अध्यक्ष, इण्डियन केमिकल सोसाइटी, कोलकाता

यूनिवर्सिटी कालेज लन्दन में अपने पीएच.डी. शोध के लिए जब मैं प्रो0 आर.एस. नाइहोम से मिला तो उन्होंने मुझसे पहला प्रश्न किया "क्या तुम हीरालाल को जानते हो।" इस प्रकार मैं प्रो0 हीरालाल निगम के व्यक्तित्व से परिचित हुआ।

— प्रो0 जी.के. नारायण रेड्डी, पूर्व कुलपति, कर्नाटक विश्वविद्यालय, बैंगलोर

मेरी वैज्ञानिक उपलब्धियों में डॉ0 निगम की प्रेरणा और प्रोत्साहन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

— डॉ0 डी.एस. भाकुनी, पूर्व वैज्ञानिक, केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

दक्ष पदार्थ (स्मार्ट मैटीरियल)

डॉ0 जी0एन0 माथुर

लेखक रक्षा सामग्री एवं भण्डार अनुसंधान तथा विकास स्थापना, कानपुर के निदेशक हैं।

सभ्यता के विकास के साथ–साथ मनुष्य नवीनतम पदार्थो की खोज नित्य ही करता आया है। आधुनिक संयन्त्रों का विकास उन्नत एवं समुचित पदार्थों के अन्वेषण से ही सफल हो पाया है। अतः उन्नत तकनीकी के विकास के लिए समुचित पदार्थों का विकास अति आवश्यक है। उन्नत पदार्थों के अन्वेषण की यह अनबुझी प्यास धातु युग से प्रारम्भ होकर, कई उन्नत सोपानों पर चढ़ती हुई आज दक्ष पदार्थों पर आ गयी है। आज विश्व के कोने–कोने में विभिन्न प्रकार के दक्ष पदार्थों का संश्लेषण एवं उनका विधिवत अभियांत्रिक उपयोग हो रहा है। वस्तुतः दक्ष पदार्थों की खोज प्राकृतिक पदार्थों एवं जीवों का अनुकरण करना है। मूलतः विज्ञान के आविष्कारों का उपयोग प्राकृतिक क्रियाओं को समझकर विभिन्न यन्त्रों को बनाने में होता है। मानव की अनुसंधान पिपासा वस्तुतः प्रकृति द्वारा बनाये गये पदार्थो एवं जीवों का अनुसरण करना है।

दक्ष संयंत्र प्राकृतिक रूप से बहुआयामी गुणों वाले होते हैं। इन संयंत्रों में बहुआयामी गुण दक्ष पदार्थों के प्रयोग के कारण होते हैं। दक्ष पदार्थों की संरचना इस प्रकार की होती है कि उनकी अति दक्षता, किफायती एवं अनुसंधान तथा विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। प्राकृतिक पदार्थों की तरह, दक्ष पदार्थ वातावरण में बदलाव की अनुभूति करते हैं, वातावरण के बदलाव को संचारित करते हैं एवं वातावरण के अनुसार संयंत्रों को नियंत्रित करते हैं। अतः दक्ष पदार्थ उस पदार्थ को कहते हैं जिसमें कम से कम उपरोक्त एक गुण हो। अर्थात् वह पदार्थ जिसमें अनुभूति करने, संचालन करने या नियंत्रित करने के एक या एक से अधिक गुण हों वह दक्ष पदार्थ कहलाता है। दक्ष पदार्थ परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तनशील होते हैं। दक्ष पदार्थों का उपयोग रक्षा, स्वचालित संयंत्रों एवं मोटर गाडियों, अन्तरिक्ष अनुसंधान, जीव विज्ञान, अति संवेदनशील यंत्र, राष्ट्रीय मार्ग, इमारतों एवं पुलों के क्षेत्रों में अति उपयोगी एवं प्रभावशाली होगा। वर्तमान समय में दक्ष पदार्थ सामान्यतः संयंत्रों की सतह पर चिपकाये जाते हैं। परन्तु इस समय सम्पूर्ण विश्व में अनुसंधान एवं विकास कार्य दक्ष पदार्थों को संयंत्रों का अभिन्न अंग बनानें की दिशा में चल रहा है।

पिछले दो दशकों से पदार्थ–वैज्ञानिक पदार्थो के संरचनात्मक गुणों के साथ–साथ क्रियात्मक गुणों को बहुत महत्व दे रहे हैं। कुछ क्रियात्मक पदार्थों जैसे कि निकल–टाइटेनियम मिश्र धातु, कैडमियम सल्फाइड, टरबियम, आयरन, क्वार्ट्ज, सिलेनियम एवं जरमेनियम का उपयोग रूप स्मरण, विद्युत दाबीय, (piezoelectric), चुम्बकत्व रोधी, (Magnetic restrictive) विद्युत तापीय, (Pyroelectric) वैद्युत प्रकाशीय (Photoelectric) एवं प्रकाश संचारण (Photo conductive) में होता है। सिलिकान का टुकडा (Chip) परिपथ (Integrated circuits) में लगाने से संगणक विज्ञान में नई क्रान्ति आयी है। गैलियम आर्सेनाइड टुकडे (Chips) लगाने की तकनीक ने सिलिकान चिप्स को भी पीछे छोड दिया है।

दक्ष पदार्थो / संयंत्रों के मुख्यतः निम्न तीन अंग होते हैं :–

(क) संवेदक
(ख) उत्तेजक एवं गतिक अंग एवं
(ग) नियंत्रक

(क) संवेदक (Sensors) :- संवेदक मुख्यतः संरचनात्मक पदार्थ के साथ में या इसकी सतह पर होता है। यह उत्तेजक वातावरण की तीव्रता को नापता है। यह संयंत्र का प्रमुख अंग होता है। यह उत्तेजक वातावरण के परिवर्तन को समय एवं स्थान के परिपेक्ष्य में सूचना / आंकडों को एकत्रित करता है। अनुभूतिक अंग के कार्य मुख्यतः निम्न तीन अंगों में विभाजित किये जा सकते हैं।

(य) यांत्रिकीय मापनः– मुख्यतः बल की मात्रा, तनाव (Strain), कम्पन का स्तर एवं कम्पन का आयाम।

(र) तापीय मापनः– संयत्र में तापमान का विस्तार की अनुभूति।

(ल) रासायनिक एवं वातावरणीय मापनः– मुख्यतः वातावरण में बदलाव एवं रासायनिक कियाओं के कारण संयंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव की अनुभूति करना।

(ख) संचालक (Actuator) :- मुख्यतः संचालक दक्ष पदार्थ की ऊपरी सतह पर दबे या चिपकाये हुए होते हैं। बाहरी उत्प्रेरण द्वारा आकार में परिवर्तन, दृढ़ता (Stiffness) या ऊर्जा के उपयोग में परिवर्तन करने पर संचालक पदार्थ नियंत्रित रूप में अपने गुणों में परिवर्तन करके संयंत्र के नियंत्रक को संकेत देते हैं। वर्णसंकर (hybrid) पदार्थ संरचनात्मक (structural) एवं कियाशील (functional) पदार्थ के रूप में कार्य करते हैं। जब किसी संयंत्र के अनुभूतिक अंग (sensor) द्वारा पदार्थ की अवस्था में परिवर्तन की अनुभूति होती है तो दक्ष पदार्थ उस परिवर्तन का परिमाण संचालक (actuator) तक पहुंचाता है। संचालक नियंत्रक से सामन्जस्य स्थापित करते हुए उपयुक्त किया करता है। इस प्रकार दक्ष पदार्थ सम्पूर्ण प्रकिया को नियंत्रित करते हुए कार्य करता है।

(ग) नियंत्रण (Controller) :– स्वचालित सिद्धान्त पर कार्य करते हुए बाह्‌य उत्प्रेरक के प्रभाव के अनुसार दक्ष पदार्थ अपने व्यवहार में बदलाव लाते हुए सम्पूर्ण प्रकिया में निर्धारित उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक परिवर्तन करते हैं। इस स्वचालित कार्य को नियंत्रण कहते हैं। इस तरह के दक्ष पदार्थों के विकास के लिए पदार्थ की भौतिक एवम् रासायनिक संरचना का ज्ञान मौलिक रूप से होना आवश्यक है।

पदार्थों में स्वाभाविक रूप से बुद्धिमत्ता विभिन्न प्रकार की होती है। यह मूलतः जैविक पद्धित की नकल मात्र है। कुछ प्रमुख दक्ष पदार्थो के गुणों, कार्य करने के सिद्धान्त एवम् उनके उपयोग के बारे में सारांश निम्नलिखित हैं :

1. दाब विद्युतीय पदार्थः– (Piezo electric materials) दाब विद्युतीय पदार्थ पर जब दाब लगाया जाता है तो इन पदार्थों में विद्युतधारा का प्रवाह होने लगता है। पदार्थ के इस गुण को दाब विद्युतीय प्रभाव कहते हैं। इसका विपरीत भी सत्य है अर्थात् विद्युत प्रवाह दाब में परिवर्तित हो जाता है। दाब विद्युतीय पदार्थ के अनुभूतिक अंग इसी उक्त विपरीत सिद्धान्त पर कार्य करते हैं। इन पदार्थों में एक समान विद्युत दाब एक निश्चित दिशा में रक्खा जाता है। दाब विद्युतीय पदार्थों में क्यूरी बिन्दु के ऊपर विद्युत क्षेत्र का प्रभाव लुप्त हो जाता है।

दाब विद्युतीय पदार्थ का उपयोग, ट्रान्सड्‌यूसर जो ध्वनि को विद्युत धारा में परिवर्तित करते हैं, के बनाने में होता है। क्वार्ट्ज दाब विद्युतीय पदार्थ का उपयोग घड़ियों में अधिकांशतः होता है।

दाब वैद्युतिक गुण प्राकृतिक क्वार्ट्ज रोशेल लवण व अन्य अप्राकृतिक पदार्थों जैसे लेड टाइटनेट, लेड जरकोनेट इत्यादि में पाया जाता है। इनका उपयोग, कंपन परीक्षण में प्रयुक्त संवेदकों जैसे त्वरण मापीय, बल मापीय के निर्माण से लेकर अति उच्च संवेदकों जैसे कम्पित्र दण्ड त्वरण मापी इत्यादि में किया जाता है। कम्पित्र दण्ड त्वरण मापी में प्राकृतिक क्वार्ट्ज के दण्ड को वैद्युतिक रूप से उत्तेजित करके उसकी प्राकृतिक आवृत्ति के नजदीक कम्पित किया जाता है इससे प्राकृतिक आवृत्ति पर होने वाले प्रभावों के द्वारा त्वरण का मापन किया जाता है।

दाब वैद्युत बहुलक को संवेदक के रूप में प्रयोग किया जाता है क्योंकि इनमें अस्थायी विकृति, निम्न एकॉस्टिक प्रतिबाधा एवम् कार्यशीलता में परिवर्तन की संभावना होती है। पालीइमाइड का प्रयोग उनमें

असाधारण ऊष्मीय, यान्त्रिक तथा परावैद्युत गुणों और उच्च रासायनिक प्रतिरोध तथा स्थिरता के कारण वायुयान के अवयवों को बनाने में किया जाता है तथा मेक्स के परावैद्युत पदार्थ के रूप में किया जाता है। इनका प्रयोग सूक्ष्मयन्त्रों में ध्वनि को नियन्त्रित करने के लिए, तेज गति से कार्य करने वाले रोबोट के विभिन्न अंगों का संचालन करने के लिए, कम्प्यूटर के प्रिन्टर तथा स्वास्थ्यमापी तन्तु पुल, इमारत तथा काष्ठ स्तम्भों में होता है।

प्रवाही पदार्थः– दक्ष पदार्थों के अन्तर्गत न केवल ठोस बल्कि द्रवों, वैद्युतप्रवाही पदार्थों तथा चुम्बकप्रवाही द्रव जो कि विद्युत आवेश तथा चुम्बकीय आवेश के कारण तुरन्त अपनी स्थिति में परिवर्तन कर लेते हैं का भी अध्ययन किया जाता है।

चुम्बकीय नैनोकॉर का किसी तेल में मिश्रण इन द्रवों का प्रयोग झटकों का अवशोषण करने, वाहनों के सीटों के अन्दर अवमंदक के रूप में, व्यायाम करने वाले यन्त्रों तथा प्रकाश सज्जा के लिए किया जाता है।

पी0एच0 संवेदनशील पदार्थ (pH sensitive materials):– जैसा कि हम जानते हैं कि वे रासायनिक यौगिक जो कि अम्ल तथा क्षार की पहचान करवाते हैं सूचक के रूप में पी0एच0 संवेदी पदार्थ कहलाते हैं। हाइड्रोजन आयनों का सान्द्रण अम्ल तथा क्षार में अलग–अलग होता है जिसके कारण आयन सान्द्रण का लघु (Log) भिन्न–भिन्न होता है तद्नुसार सूचकों का रंग परिवर्तित होता जाता है। अतः इन्हें पी0एच0 संवेदी पदार्थ कहते हैं। मुख्य रूप से इनका प्रयोग अनुमापन में किया जाता है। कार्बनिक वाष्पों के बहुलकीय पर्तों की पारगम्यता के सिद्धान्त पर आधारित अनेक युक्तियों का विकास सत्तर के दशक में हुआ। इन युक्तियों में दो पर्तों में बहुलक फिल्म होती है जिनमें से पहली पर्त कार्बनिक वाष्पों के विसरण को नियन्त्रित करती है तथा दूसरी अति सूक्ष्म छिद्रों की पर्त इस तन्त्र को क्रियाशील होने से रोकती है। युक्ति के शेष भाग में एक कागज की पट्टी होती है या छिद्र युक्त अवरोधक होता है जिसमें कि अम्ल अथवा क्षार का लेपन होता है तथा साथ में एक सूचक भी होता है, इसके फटने से तन्त्र क्रियाशील हो जाता है। वाष्पशील यौगिक फिल्म के अंन्दर से होकर गुजरता है जिससे यह भीगती है और कागज में लगे हुये रसायन से क्रिया करती है तथा सूचक का रंग परिवर्तित हो जाता है। उच्च ताप पर रंग तेजी से बदलता है तथा निम्न ताप पर धीरे–धीरे बदलता है।

प्रकाश संवेदी पदार्थ (Photostrictive materials):– बहुत से पदार्थ ऐसे होते हैं जो प्रकाश के प्रति अनेक प्रकार से संवेदी होते है। इनमें से एक संवेदनशीलता इस प्रकार से होती है जिसमें प्रकाश तरंग में वैद्युत क्षेत्र के परिवर्तन के कारण पदार्थ का रंग परिवर्तित हो जाता है जिसे हम वैद्युत वर्णता कहते हैं। दूसरी संवेदनशीलताओं के अन्तर्गत ऊष्मीय वर्णता (ऊष्मा के कारण रंग में परिवर्तन), प्रकाशवर्णता (उत्क्रमणीय प्रकाश संवेदी पदार्थ) छायांकन पदार्थ (अनुत्क्रमणीय प्रकाश संवेदी पदार्थ) तथा प्रकाश प्रभावी (वे पदार्थ जिनपर प्रकाश पडने से इलेक्ट्रॉनिक संरचना में परिवर्तन होने के कारण उनका आकार परिवर्तित हो जाता है। वैद्युत एवं ऊष्मावर्णी पदार्थों में से एक Li_xVO_2 (यहां पर x किसी तत्व का आक्सीकरण स्तर है) का प्रयोग दक्ष खिड़कियों के लिए किया जाता है।

ऊष्मासूचक पदार्थ (Thermo responsive materials):– शेप मेमोरी एलॉय, प्रमुख दक्ष पदार्थ ताप या शीत के आधार पर अपने आकार में परिवर्तन करता है। इसका प्रमुख उदाहरण निटिनॉल निकिल तथा टाइटेनियम की मिश्र धातु है। इसके अतिरिक्त सोना/कैडिमियम, चांदी/कैडिमियम, तॉबा–एल्युमिनियम–निकिल, तांबा–टिन, तांबा–जस्ता तथा तांबा–जस्ता–एल्युमिनियम–निकिल, तॉबा–जस्ता–एल्युमिनियम मिश्र धातुऐं हैं।

इनका उपयोग युग्मक ताप स्थिर, ऑटोमोबाइल, वायुयान तथा हेलिकाप्टर के अवयवों को बनाने में किया जाता है।

वैद्युत एवं चुम्बकीय स्ट्रिक्टिव पदार्थ (Electrostractive and magnostrictive materials):– इन पदार्थो में वैद्युत अथवा चुम्बकीय क्षेत्र के कारण पदार्थ के आकार में परिवर्तन होनें का गुण होता है। और साथ ही साथ विपरीत स्थिति में इनके आकार में परिवर्तन होने पर इनके सिरों के बीच

विभवान्तर भी होता है। टरफिनॉल–डी, पी जेड टी इसके मुख्य उदाहरण हैं।

इन पदार्थों के उपयोग का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इनका उपयोग प्लब, वाल्व, वायुयान शॉक ट्यूब यन्त्रों, जीव यान्त्रिक बसों के मापन, खेलकूद के सामानों तथा उनमें उपयोग होने वाले यन्त्रों, तंत्रिका विज्ञान, हृदय रोग में प्रयोग होने वाले यन्त्रों आदि में सुचारू रूप से होता है।

दक्ष बहुलक (Smart polymers):– ये बहुलक अपने आस–पास के वातावरण में होने वाले परिवर्तन जैसे ताप, पी0एच0, आयन, विलायक अभिकर्मकों, पराबैंगनी अथवा प्रकाश वितरण, प्रतिबल, वैद्युत तथा चुम्बकीय क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तनों से प्रेरित होकर तुरन्त इसकी सूचना देते हैं। यह परिवर्तन उनकी अवस्था, आकार, प्रकाशमितीय, अभियान्त्रिकीय वैद्युत क्षेत्र पृष्ठ ऊर्जाओं, अभिक्रिया दर तथा पारगम्यता दर में परिवर्तन के कारण प्रकट होता है। वह बहुलक जो इस वर्ग के अन्तर्गत आते हैं उनमें प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले बहुलक एक्रिलिक बहुलक, सहबहुलक तथा अम्लीय एकलक तथा क्षारीय एकलक के संयोगो से प्राप्त बहुलक आदि हैं। एक बहुलक जिसका उपयोग इस क्षेत्र में बहुलाधिक होता है वो है पीवीडीएफ, (पॉलीविनाइलडीन फ्लोराइड) इस बहुलक के मुख्य गुणों में इसकी संरचना, आणविक विन्यास, असाधारण उच्चदाब वैद्युत प्रभाव तथा उत्ताप वैद्युत सक्रियता एवं प्रकाशमिति हैं। पी वी डी एफ का अनुप्रयोग लघुछिद्र एंटीना को बनाने में किया जाता है।

दक्ष जेल (Smart jel):– ये वे जेल हैं जो किसी रासायनिक अथवा भौतिक उद्दीपन के कारण अपने मूल आकार से 1000 गुना कम अथवा अधिक हो जाते हैं। इन जेल के कृषि, भोज्य पदार्थ, औषधि विज्ञान, सौन्दर्य प्रसाधान, कृत्रिम अंगों के निर्माण तथा रासायनिक क्रिया प्रणाली में होता है।

दक्ष उत्प्रेरक (Smart catalyst):– अनुसंधान के क्षेत्र में दक्ष उत्प्रेरकों का विकास विज्ञान का एक नया क्षेत्र है। दक्ष उत्प्रेरक किन्हीं विशेष परिस्थितियों में क्रियाशील होते हैं और उन परिस्थितियों के विरक्त हो जाने पर स्वतः अक्रिय हो जाते हैं और पुनः उन परिस्थितियों की पुनरावृत्ति पर क्रियाशील हो जाते हैं। इस प्रकार के उत्प्रेरकों का एक वर्ग समांगी रेडियम पॉलीएल्कीन आक्साइड पर आधारित है। पारम्परिक रूप से रासायनिक उत्प्रेरक की विशेषता एवं सक्रियता बढती जाती है। इसके कारण ऊष्माउत्सर्जन होता है जो कि सुरक्षा की दृश्टि से समस्यात्मक हो सकता है। इसके विपरीत दक्ष उत्प्रेरक अलग तरीके से व्यवहार करते हैं। तापमान बढने के साथ–साथ इनकी विलेयता घटती जाती है जिसके परिणामस्वरूप यह विलयन में अवक्षेप के रूप में प्रकट होते हैं और अक्रिय हो जाते हैं। जैसे ही अभिकर्मकों का मिश्रण शीतलता को प्राप्त करता है दक्ष उत्प्रेरक पुनः घुलकर सक्रिय हो जाते है। अन्य अनेक दक्ष उत्प्रेरकों का विकास हो रहा है जो उच्च ताप पर कम क्रियाशील और निम्नताप पर अधिक क्रियाशील हो जाते हैं।

प्रत्यास्थ प्रतिरोधी पदार्थ (Elastostrictive materials):– प्रत्यास्थ प्रतिरोधी पदार्थ विद्युत प्रतिरोधी एवं चुम्बकीय प्रतिरोधी पदार्थों की तरह कार्य करते हैं। प्रत्यास्थ प्रतिरोधी प्रतिबल पदार्थो में अधिक शिथिलता (हिस्टेरिसिस) होती है। यह शिथिलता लौह प्रत्यास्थ डोमेन दीवारों के गति के कारण होती है। पदार्थ का यह गुण मार्टिन्सिटिक अवस्था के बदलाव के समय बड़ा ही जटिल होता है। मार्टिन्सिटिक अवस्था स्मृति मिश्रधातुएँ विस्तारित एवं मिले हुए परिवर्तनों के साथ उच्च एवं निम्नताप की अवस्थाओं में होती है। डोमेन दीवारों की गति उच्च ताप पर आस्टेनिटिक अवस्था के आते ही विलुप्त हो जाती है।

प्रकाशसंवेदी बहुलक (Photoresponsive polymers):– ये बहुलक प्रकाश विकरण के प्रति संवेदनशील होते हैं। इस प्रकार का बहुलक पेन्डेन्ट एजोवेन्जीन समूहों में एक कार्बन सल्फाइड के साथ पॉलीस्टाइरीन का पारगमन, प्रकाश उद्दीपक उत्क्रमणीय सॉल–जेल है। इस प्रकार के बहुलक तन्त्र का संभावित अनुप्रयोग प्रकाशीय आंकडो का संग्रहण या प्रदर्शन है।

वैद्युत रिओलोजिकल द्रव (ईआर) Electro-rhiological fluids (ER):– ई आर पदार्थ निलम्बन है। जब वे वैद्युत क्षेत्र के अधीन होते हैं तो रिओलोजिकल गुणों जैसे कि श्यानता, प्लास्टिसिटी एवं प्रत्यास्थता में

उत्क्रमणीय परिवर्तनों की अनुभूति 'कराते हैं। यह बहुलकीय अथवा कुचालक द्रव जैसे हेप्टेन एवं सिलिकॉन ऑयल में धात्विक के प्रारूपिक उत्कृष्ट सस्पेन्शन हैं।

यूरेथेन परिष्कृत पॉलीईथर, हार्ड–साफ्ट–हार्ड बहुलक पॉलीप्रोपिलीन ग्लाइकोल एवं नेफ्थलीन हाई आइसोसायनेट से बनाए जाते हैं, वैद्युत क्षेत्र में श्यानता में वृद्धि प्रदर्शित करते है (धनात्मक ई आर प्रभाव) सॉफ्ट–हार्ड–सॉफ्ट बहुलक समान रूप से तैयार किए जाते हैं श्यानता में कमी प्रदर्शित करते हैं (ऋणात्मक इलेक्ट्रोलॉजिकल प्रभाव)। ये पदार्थ ऑटोमोटिव अनुप्रयोगों के लिए वाल्व, माउन्ट, क्लच एवं ब्रेक में प्रयोग किए जाते हैं।

चुम्बकीय रिओलॉजिकल द्रव (एम आर) Magnetorhiological fluids (MR):– एम आर पदार्थ निलम्बन हैं। जब वे चुम्बकीय क्षेत्र के सम्पर्क में होते हैं तो रिओलॉजिकल गुणों जैसे श्यानता, प्लास्टिसिटी एवं प्रत्यास्थता में उत्क्रमणीय परिवर्तनों का अनुभव कराते हैं। ये भी बहुलकीय अथवा कुचालक द्रव जैसे कि हेप्टेन एवं सिलिकॉन ऑयल में धात्विक के प्रारूपी उत्तम सस्पेन्शन हैं। परिवर्तनीय वैलेन्सी वाले धातु यौगिक के साथ पॉलीविनाइल एल्कोहल जब चुम्बकीय क्षेत्र में अनावृत किया जाता है तो श्यानता में वृद्धि या कमी प्रदर्शित करता है। इसे संवेदक या संचालक के रूप में प्रयोग में लाते हैं।

दक्ष संयत्र (Smart instruments):– दक्ष संयत्रों में संवेदकों एवंम संचालकों का बडा महत्व है। बल्कि यह कहना अधिक तर्क संगत होगा कि दक्ष संयत्रों की आधारशिला संवेदक और संचालक हैं। संवेदकों में हमारी ज्ञानेन्द्रियों जैसे गुण होते हैं। ये संवेदक अपने आसपास के वातावरण में होने वाले परिवर्तन को तुरन्त पहचान लेते हैं और इनके संकेतों के आधार पर संचालक अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं। यह सारी की सारी प्रकिया इतनी शीघ्र होती है कि जिसकी हम कल तक कल्पना भी नहीं कर सकते थे। संवेदकों एवंम संचालकों के इस सामंजस्य के परिणाम स्वरूप आने वाले कल में हमें दक्ष कारें, दक्ष संगणक, दक्ष वस्त्र, दक्ष यन्त्र मानव, दक्ष नाक व दक्ष मकान देखने को मिलेंगे। कैसे होंगे ये ? आइये इन पर एक दृष्टिपात करते हैं।

1. दक्ष वस्त्रः– चॉदी, ताम्र या स्टेनलेस स्टील के तन्तुओं से बने दक्ष वस्त्र दुर्गन्ध मुक्त वायु, सूक्ष्म जीवाणुओं, उच्च ऊर्जा विकिरण आदि से मानव की रक्षा करेंगे। सिरेमिक सूक्ष्म गोलकों से युक्त नायलोन के वस्त्र में चांदी के आयनों का स्राव होता है जो सूक्ष्मजीवाणुओं व विषाणुओं को नष्ट करता है। सैनिकों के वस्त्रों में विषैली रसायन संवेदी पर्चियां बुनी होंगी व कमीजों पर कियान्वित कार्बन का लेप रहेगा जो प्राणघातक गैसों व रसायन से उनकी रक्षा करेगा। संवेदक पसीने का भी रसायनिक विश्लेषण करेंगे और पहनने वाले को होने वाले संभावित रोगों की पूर्व सूचना देंगे। एलिजाब्रेक सेनेली ने ऐसे वस्त्र तैयार किये हैं जिनसे सुगन्धित द्रव निकलकर त्वचा पर फैलता है। वातावरण की आर्द्रता के अनुसार अपना रंग बदलने वाले वस्त्र आज उपलब्ध हैं जो सूर्य प्रकाश में नीले, मेघाच्छदित वातावरण में भूरे तथा वर्षाकाल में नारंगी रंग के हो जाते हैं। संगणक, दूरभाष आदि समस्त इलेक्ट्रॉनिक उपकरण बहुत ही छोटे एवं पतले बनाकर वस्त्रों में ही सिलवाये जा सकेंगे। वस्त्रों में लगे प्रकाश संवेदी बहुलक, सौर उर्जा का अवशोषण करके इन उपकरणों को चलायेंगे।

2. दक्ष संगणक (Smart computer):– पिछले दो दशकों से कृत्रिम तंत्रिका जालिका (Artificial system network) पर आधारित संगणक के विकास पर कार्य हो रहा है। यह प्रणाली मानव के न्यूरॉन्स के कार्य करने के सिद्धान्त पर आधारित है। जब अंतर्गमती संदेश किसी निश्चित सीमा को पार कर जाता है तो न्यूरॉन्स उत्तेजित हो उस संदेश को आगे प्रेषित करते हैं तथा मस्तिष्क के केन्द्र में संदेश पहुंचता है। कृत्रिम तंत्रिका जाल में न्यूरॉन्स की जालिकाओं के अनेक स्तर होते हैं। इस प्रकार प्राप्त संदेशों का विश्लेषण करके संगणक अपना कार्य सम्पन्न करता है। आने वाले कल में इन संगणकों का उपयोग वायुयान, आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों का अनुमान लगानें, उधार कार्ड या चेकों में होने वाले घपलों का पता लगाने, तेल स्रोतों का पता लगाने व अन्य जोखिम का अनुमान लगानें में किया जा सकेगा।

3. दक्ष नाक (Smart nose):– यह गन्ध संवेदी

बहुलक तन्तुओं की जालिका एवं सूक्ष्म संगणकों से युक्त होगी। इसके करने का सिद्वान्त यह है कि वायु के रासायनिक गुणधर्मों के अनुसार संवेदक तन्तु कम या अधिक प्रभावित होते हैं और तद्नुसार उनकी विद्युत चालकता परिवर्तित होती है। विद्युत चालकता में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार सूक्ष्म संगणक के पर्दे पर इलेक्ट्रॉनिक प्रारूप का निर्माण होता है। इसमें सूक्ष्म संगणक की स्मृति में रक्खे सैकडों प्रारूपों के साथ तुलना करके पहचाना जा सकता है। अब तक 64 संवेदकों कि जालिका का निर्माण हो चुका है किन्तु मस्तिष्क में सैकडों संवेदकों की जालिका का प्रयोग किया जायेगा। इसे अन्न पदार्थ, पेय, शराब, नशीले पदार्थ, घातक या विषैले रसायन, विस्फोटक आदि की जांच में उपयोग में लाया जा सकेगा। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग मानव शरीर से स्रावित होने वाले रसायनों का विश्लेषण करके विभिन्न रोगों की पहचान व निदान करनें में हो सकेगा।[31]

4. दक्ष मकान (Smart house):– कल हमारा घर दक्ष मकान कहलायेगा। इस घर का प्रत्येक उपकरण स्वचालित होगा। इस घर की खिडकियाँ प्रकाश एवम वायु का नियन्त्रण स्वंय करेंगी। घरेलू उपकरण शब्द संवेदी होने के कारण केवल आवाज के संदेश पर कार्य करेंगे। दक्ष स्नान गृह हमारे मूत्र या थूक का परीक्षण करके संभावित रोगों की पूर्व सूचना दे सकेंगे। दूरभाष, टीवी तथा संगणक एकीकृत हो जायेंगे। अत्यन्त पतले टीवी फोटो फ्रेम की भांति दीवारों पर लगेंगे। विश्व का समस्त ज्ञान सूचना एवम प्रसारण तकनीक के विकसित होने के कारण घर में उपलब्ध होगा। परिवार के प्रत्येक सदस्य के जीन्स की जानकारी संगणक में होगी। किसी भी रोग में हमें कौन सी औषधि लेनी है इसका निर्णय जीन्स के आधार पर लिया जायेगा। दक्ष संवेदक चोर उचक्कों की सूचना स्वंय ही पुलिस चौकी में पहुंचायेंगे। इस मकान का दक्ष प्रवेश द्वार परिवार के सदस्यों के आने पर ही खुलेगा।[32]

5. दक्ष कार (Smart Car):– चालक एवम् सहयात्रियों के मूड के अनुसार उनके सुख सुविधा का ख्याल रखनें वाली यह कारें सूक्ष्म त्वरण मापी व विद्युत संम्पीडकों से युक्त होंगी। विद्युत सम्पीडक संवेदक एवम् ध्वनि कुंडली द्वारा सीट का सक्रिय संदमन (Active suppression) होगा। त्वरण मापक एवंम विद्युत सम्पीडक युक्त प्रणाली से चालक द्वारा निर्देशित दिशा तथा गति पर नियंन्त्रण रखा जा सकेगा। कार के आगे और पीछे लगे संवेदक खतरे की सूचना देंगे और ऐसी स्थिति में स्वतः ब्रेक लगने की व्यवस्था होगी। चालक चक्र में लगे संवेदक चालक के चेहरे का निरीक्षण करेंगे और उसमें झपकी लेते ही खतरे की घंटी बजने लगेगी। प्रकाश संवेदी शीशे के द्वारा कार में स्वतः प्रकाश नियंत्रण की व्यवस्था भी होगी। विश्व स्थैतिक (World geographical network) प्रणाली द्वारा संम्पर्क बनाकर कहीं भी जाने का रास्ता पूछा जा सकेगा। इन कारों की गति 240 किलोमीटर / घंटा होगी।[33]

6. दक्ष यन्त्र मानव (Smart Robot):– आने वाले कल के यन्त्र मानव स्पर्श ज्ञान से युक्त होंगे। इसकी हथेली पर स्पर्श संवेदकों का जाल होगा। विविध बिन्दुओं पर कितना दबाव पड रहा है इसके संदेश यंत्र मस्तिष्क को प्राप्त होते रहेंगे। उसके ही अनुरूप कल का यंत्र मानव अपनी पकड़ निश्चित करेगा। यह प्रतिरूप पहचान तकनीक (Pattern recognition technique) से भी युक्त होंगे जिसके कारण सैकड़ों वस्तुओं में से अपने मतलब की वस्तु को उठाने की क्षमता होगी। इतना ही नहीं, यदि वह वस्तु किसी भी कोण में घुमाकर रख दी जाये तो भी यह उसे पहचान लेंगे। इनके अन्दर संवेदकों से युक्त नाक, जीभ व कान भी होंगे।

जिस प्रकार आज से लगभग दो सौ वर्ष पहले टेलीफोन, टेलीवीजन, कारें एवं संगणक इत्यादि, संयन्त्र एक सपने जैसे प्रतीत होते थे परन्तु आज यह एक वास्तविकता है। इसी प्रकार उपरोक्त संयन्त्र, दक्ष पदार्थों के उपयोग से अगले पचास वर्षो में हर मनुष्य के उपयोग के लिए उपलब्ध होंगे।

नाभिकीय रिएक्टर एवं ईंधन

डॉ0 हरस्वरूप शर्मा

लेखक प्रो0 निगम के शिष्य हैं। सम्प्रति भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं।

भौतिकी का यह सिद्धान्त सर्वविदित है कि एक न्यूट्रॉन यूरेनियम के नाभिक को दो भागों में विखडिंत कर सकता है। इस विखंडन अभिक्रिया मे 2–3 न्यूट्रॉनो का उत्सर्जन तथा साथ ही लगभग 200 मिलियन इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा का उत्पादन होता है। यदि उत्सर्जित न्यूट्रॉनों में से केवल एक न्यूट्रॉन को अन्य यूरेनियम परमाणु के विखंडन में उपयोग किया जाये तो इस प्रकार की अभिक्रिया को शृंखला–बद्ध नियंत्रित अभिक्रिया कहा जाता है। नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन का यही मूलभूत सिद्धान्त है। अभिक्रिया में उत्पन्न तापीय ऊर्जा को हम विद्युत उत्पादन में भी उपयोग कर सकते हैं। वस्तुतः वह प्रणाली अथवा सयंत्र जो नाभिकीय नियंत्रित अभिक्रिया को सुचारू रूप से चलाने में सहायक होता है, नाभिकीय रिएक्टर तथा वे पदार्थ जिनका उपयोग नाभिकीय रिएक्टरों में ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जाता है, उन्हें हम नाभिकीय ईंधन कहते हैं। प्रायः नाभिकीय ईंधन के लिये यूरेनियम तथा प्लूटोनियम को धातु अथवा विभिन्न रासायनिक यौगिकों के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके पहले कि हम नाभिकीय ईंधन के निर्माण एवं गुणधर्मो को विस्तार में समझने का प्रयास करें यह आवश्यक है कि नाभिकीय रिएक्टरों के विषय में एक संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर लें।

नाभिकीय रिएक्टर के घटक

ईंधन, शीतलक, मंदक, एवं नियंत्रण छड़ नाभिकीय रिएक्टर के मुख्य घटक हैं। नाभिकीय ईंधन यूरेनियम तथा प्लूटोनियम के धातु, मिश्र–धातु, ऑक्साइड, कार्बाइड तथा नाइट्राइडों के रूप में निर्मित किया जाता है । नाभिकीय ईंधन का निर्माण बहुधा आयताकार प्लेटों अथवा छोटी–छोटी बेलनाकार टिकियों के रूप में किया जाता है। ईंधन की इन टिकियाओं को धातु अथवा मिश्र–धातु निर्मित नलिकाओं में बंद रखा जाता है। नलिकाओं को आवरण (क्लॅड) के नाम से जानते है। आवरण नलिकाओं का कार्य नाभिकीय अभिक्रिया के दौरान उत्पादित तापीय ऊर्जा का स्थानांतरण शीतलक में करना तथा उत्पादित रेडियोधर्मी विखंडन उत्पादों को अपने अंदर समाहित रखना होता है। शीतलक विखंडन अभिक्रिया के दौरान उत्पन्न तापीय ऊर्जा को वाष्प उत्पादन के लिए तापीय–विनिमय–संयंत्र में ले जाता है तदुपरान्त टर्बाईन में विद्युत उत्पादन किया जाता है। हलका पानी, भारी पानी, अथवा गैस को शीतलक के रूप में विभिन्न रिएक्टरों में प्रयोग करते है। शीतलक को पम्पों की सहायता से आवरणीय नलिकाओं के समीप तापीय ऊर्जा स्थानांतरण के लिए प्रवाहित किया जाता है। यहां पर हम यह भलीभांति समझ लें कि आवरण का कार्य तापीय ऊर्जा स्थानांतरण के दौरान शीतलक एवं ईंधन को एक–दूसरे के सीधे संपर्क में आने से रोकना है।

मंदक वे पदार्थ हैं जिनका उपयोग रिएक्टर प्रचालन के दौरान तीव्रगति वाले न्यूट्रॉनों को धीमी गति में परिवर्तित करना होता है। इस क्रिया को मंदन कहते है। हलका पानी, भारी पानी तथा ग्रेफाइट रॉड आदि पदार्थों को मंदक के रूप मे आवश्यकतानुसार विभिन्न रिएक्टरों में उपयोग किया जाता है।

नाभिकीय अभिक्रिया के दौरान 10 मिलियन

इलेक्ट्रॉन वोल्ट तक ऊर्जा वाले न्यूट्रॉनों का उत्पादन होता है। तीव्र गति वाले न्यूट्रॉनों की तुलना में धीमी गति वाले न्यूट्रॉन विखडंन अभिक्रिया के लिये अधिक प्रभावशाली होते हैं। अतः रिएक्टर प्रचालन के दौरान इन तीव्र गति वाले न्यूट्रॉनों को धीमी गति वाले न्यूट्रॉनों में परिवर्तित करने की आवश्यकता पड़ती है।

रिएक्टर प्रचालन के दौरान नाभिकीय अभिक्रिया को नियंत्रित रूप से चलाने के लिये नियंत्रण छड़ों का उपयोग किया जाता है। यह नियंत्रण छड़ बोरॉन तथा कैडमियम धातु के बने होते हैं। इन पदार्थों में न्यूट्रॉन अवशोषण की सामर्थ्य बहुत अच्छी होती है। आवश्यकतानुसार इन नियंत्रण छड़ों को रिएक्टर के अंदर अथवा बाहर लाया, ले जाया जाता है तथा इस प्रकार श्रृंखला अभिक्रिया को नियंत्रित किया जाता है। अभी तक हमने नाभिकीय रिएक्टर से सम्बंन्धित आवश्यक घटकों को जानने का प्रयास किया। लेख के अगले भाग में हम विभिन्न नाभिकीय रिएक्टरों पर संक्षेप में चर्चा करेंगे।

नाभिकीय रिएक्टर

नाभिकीय रिएक्टरों को व्यापक तौर पर दो प्रकार के रिएक्टरों में वर्गीकृत किया जा सकता है। शक्ति रिएक्टर एवं अनुसंधान रिएक्टर। शक्ति रिएक्टरों का उपयोग विद्युत उत्पादन में किया जाता है तथा अनुसंधान रिएक्टरों के द्वारा विज्ञान की विभिन्न विधाओं में अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रमों को चलाना होता है। आज कल हमारे अनुसंधान रिएक्टरों में विभिन्न प्रकार के समस्थानिकों का उत्पादन किया जाता है तथा इन समस्थानिकों का उपयोग चिकित्सा, कृषि एवं उद्योग जैसे विभिन्न क्षेत्रों में लगातार हो रहा है। हमारे विभिन्न अनुसंधान रिएक्टर, अप्सरा, सायरस एवं ध्रुव भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र मुंबई में कार्यरत हैं। इन अनुसंधान रिएक्टरों में किस प्रकार के ईंधन का प्रयोग किया जाता है तथा इसका उत्पादन कहां होता होता है, इस विषय पर चर्चा हम इस लेख में करेंगे।

शक्ति रिएक्टर

नाभिकीय शक्ति रिएक्टरों को सरलता से समझाने के लिये हम इन्हें शीतलक एवं मदंक के आधार पर भी वर्गीकृत कर सकते है।

हलके पानी वाले रिएक्टर

इन रिएक्टरों में हलके पानी को शीतलक एवं मदंक दोनों के रूप में उपयोग किया जाता है। हलका पानी भारी पानी की तुलना में न्यूट्रॉनों का अवशोषण करता है। मंदन में अधिक प्रभावशाली होता है। इस कारणवश इस प्रकार के रिएक्टरों में यूरेनियम ऑक्साइड के ईंधन को लगभग 3 प्रतिशत तक संवर्धित करने की आवश्यकता पड़ती है। तारापुर (महाराष्ट्र) में कार्यरत 220 मेगावाट विद्युत क्षमता वाले दो रिएक्टर इस पद्धति पर आधारित हैं। समूचे विश्व में लगभग 350 हलके पानी वाले रिएक्टर जिनकी कुल उत्पादन क्षमता 310 गीगावाट विद्युत है, कार्यरत हैं।

भारी पानी रिएक्टर

इस प्रकार के रिएक्टरों में भारी पानी को शीतलक एवं मंदक, दोनों के रुप में तथा प्राकृतिक यूरेनियम ऑक्साइड को ईंधन के रुप में उपयोग करते हैं। भारी पानी हलके पानी की तुलना में न्यूट्रॉनों का अवशोषण बहुत कम करता है। अतः इस प्रकार के रिएक्टरों में ईंधन को संवर्धित करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में प्राकृतिक यूरेनियम ऑक्साइड–भारी पानी पद्धति काफी हद तक सफल सिद्ध हुई है। रावतभाटा (राजस्थान), कायगा (कर्नाटक), काकरापार (गुजरात) स्थानों पर भारी पानी रिएक्टरों का संचालन सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इन रिएक्टरों को दाबीय भारी पानी रिएक्टरों के नाम से भी जाना जाता है। इस समय हमारे देश में लगभग 2500 मेगावाट विद्युत का उत्पादन नाभिकीय रिएक्टरों द्वारा किया जा रहा है।

तीव्र प्रजनन रिएक्टर

अभी तक नाभिकीय रिएक्टरों के विषय में हम यह जानकारी प्राप्त कर चुके हैं कि तापीय रिएक्टरों में धीमी गति न्यूट्रॉनों का उपयोग नाभिकीय विखंडन अभिक्रिया को सुचारु रुप से चलाने में किया जाता है। यहां यह समझना आवश्यक है कि धीमी गति वाले यह न्यूट्रॉन विखंडनशील समस्थानिकों का विखंडन आसानी से कर सकते हैं। तथा प्रत्येक विखंडन में 2–3 तक

न्यूट्रॉनों का उत्सर्जन के साथ–साथ 200 मिलियन इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पादन भी होता है। तीव्र न्यूट्रॉन प्रजनन रिएक्टरों में तीव्र गति के न्यूट्रॉनों को विखंडन अभिक्रिया के लिये उपयोग में लाया जाता है। चूंकि हम तीव्र गति वाले न्यूट्रॉनों का उपयोग करना चाहते हैं। अतः ईंधन में उच्चतम विखंडनशील समस्थानिकों की आवश्यकता पड़ती है। हम जानते है कि प्राकृतिक यूरेनियम में यूरेनियम–235 जो कि एक विखंडनशील समस्थानिक है, की मात्रा बहुत कम (0.72 प्रतिशत) होती है। तीव्र प्रजनन रिएक्टरों में तीव्र गति न्यूट्रॉनों का उपयोग किया जाता है, अतः इस रिएक्टर के ईंधन मे किसी एक प्रकार के विखंडनशील समस्थानिकों (यूरेनियम–235, प्लूटोनियम–239) को लगभग 3 प्रतिशत तक सवंर्धित करने की आवश्यकता पड़ती है। प्रत्येक विखंडन में 3 न्यूट्रॉनों का उत्सर्जन होता है। इसमें से एक न्यूट्रॉन को विखंडन शृंखला अभिक्रिया को सुचारु रूप से चलाने में उपयोग किया जा सकता है तथा शेष दो को दूसरे विखंडनशील समस्थानिकों (प्लूटोनियम–239) के उत्पादन में उपयोग किया जा सकता है। इसका यह तात्पर्य है कि इस प्रकार की रिएक्टर प्रणाली में 200 मिलियन इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पादन के साथ–साथ विखंडनशील समस्थानिकों का उत्पादन भी होता है। अतः जितना विखंडनशील पदार्थ हम रिएक्टर ईंधन में लगाते हैं उससे अधिक विखंडनशील पदार्थ उत्पादन करने में सफल होते हैं।

नाभिकीय ईंधन

ईंधन रिएक्टर का हृदय है जो अपना विखंडन करके तापीय ऊर्जा एवं 2–3 न्यूट्रॉनों का उत्पादन करता है। इन न्यूट्रॉनों को अन्य परमाणुओं के विखंडन में तथा तापीय ऊर्जा को विद्युत उत्पादन में उपयोग करते है। नाभिकीय ईंधन निर्माण में विखंडनशील तथा उर्वर समस्थानिकों का समावेश विवेकपूर्ण निर्णय के आधार पर किया जाता है। ईंधन में विखंडनशील पदार्थों की मात्रा तथा ईंधन का भौतिक रूप बहुत सारे तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। इनमें रिएक्टर का प्रकार, शीतलक का चयन तथा इसका तापक्रम, रिएक्टर की शक्ति उत्पादन गति आदि महत्त्वपूर्ण है। ईंधन का निर्माण पट्टियों, छड़ों, पिनों आदि के रूप में किया जाता है।

यूरेनियम आधारित ईंधन

यूरेनियम धातु तथा मिश्र–धातु निम्न गलनांक वाले पदार्थ हैं। तथा इनमें साधारण तापमान से गलनांक तक बहुत से सहगामी प्रावस्था परिवर्तन एवं आयतन परिवर्तन होते हैं। ये पदार्थ तीन क्षैतिक दिशाओं में असमदैशिक व्यवहार दर्शाते हैं। इस कारण यूरेनियम की धातु तथा मिश्र–धातु की बनी पट्टियां उच्चताप पर गलने लगती हैं तथा इन्हें रिएक्टर में ऊर्जा उत्पादन के लिये अधिक समय तक नही रखा जा सकता। इसके अतिरिक्त यूरेनियम पदार्थ स्वतः ज्वलनशील होते हैं तथा ईंधन निर्माण के दौरान निष्क्रिय गैसों की आवश्यकता पडती है। इसके साथ–साथ यूरेनियम धातु शीतलक एवं आवरण के साथ अति क्रियाशील भी होते हैं। अनुसंधान रिएक्टरों में जहाँ संचालक ताप अपेक्षाकृत कम रहता है। यूरेनियम धातु को ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है। यूरेनियम को एल्युमिनियम के साथ मिश्र–धातु बनाने से इसके गुणधर्मों में लाभकारी परिवर्तन होता है। हमारे देश में यूरेनियम धातु ईंधन तथा एल्युमिनियम आवरण का निर्माण कार्य, साइरस अनुसंधान रिएक्टर के लिये वर्ष 1959 में आरंम्भ हुआ। इस जानकारी के आधार पर दूसरे अनुसंधान रिएक्टर "ध्रुव" (100 मेगावाट) का निर्माण बाद में किया गया। यूरेनियम धातु को यूरेनियम हेक्साफ्लोराइड के तापीय अपचन विधि द्वारा इनगोटों के रूप में तैयार करने के पश्चात् साफ–सुथरी एवं एक विशेष आकार वाली छड़ों के रूप में तैयार किया जाता है। इन यूरेनियम धातु छड़ों को एल्युमिनियम नलिकाओं में रखकर उन्हें सिरों पर वेल्डिंग द्वारा आवरण नली के साथ तापीय स्थानान्तरण के लिये जोड़ दिया जाता है। इसके पश्चात ईंधन पिनो तथा सबअसेम्बिलियों को स्वीकृत परिकल्पना के आधार पर तैयार किया जाता है।

मिश्र–धातु आधारित ईंधन

इस प्रकार के नाभिकीय ईंधन का निर्माण विशेषतः उन अनुसंधान रिएक्टरों के लिये किया जाता है जिनका उपयोग न्यूट्रॉन स्रोत के रूप में होता है यूरेनियम–233 को एल्युमिनियम के साथ अथव प्लूटोनियम को एल्युमिनियम के साथ विशेष मात्रा मे

मिश्र–धातु बनाकर 30 मेगावाट वाले "कामिनी" रिएक्टर के लिये, इस ईंधन का निर्माण कार्य भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र मुंबई में किया गया है। यह एक सरोवर के प्रकार का रिएक्टर है तथा इसमें हलके पानी को शीतलक एवं मंदक के रुप में उपयोग करते है। इस प्रकार के ईंधन निर्माण कार्य को चलाने में परमाणु उर्जा विभाग ने थोरियम उपयोगी कार्यक्रम में प्रारंभिक पकड़ प्राप्त कर ली है। हम यहाँ भलीभांति समझ सकते हैं कि भारत में केरल तट पर थोरियम के विशाल भंडार है तथा यूरेनियम–233 समस्थानिक जो कि मिश्र–धातु ईंधन का मुख्य घटक है, का उत्पादन थोरियम से नाभिकीय अभिक्रिया द्वारा किया जाता है। आगे चलकर हम देखेगें कि यूरेनियम–233 जो कि यूरेनियम–235 अथवा प्लूटोनियम जैसा विखंडनीय समस्थानिक हैं, का उत्पादन एवं उपयोगीकरण नाभिकीय ईंधन के भावी कार्यक्रमों में एक अहम भूमिका निभायेगा।

एल्युमिनियम मेट्रिक्स में U_3Si_2 आधारित विक्षेपित ईंधन के निर्माण का विकास कार्य भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र मुंबई में किया गया है। इस प्रकार के ईंधन निर्माण में मुख्य ईंधन पदार्थ (U_3Si_2) जिसमें यूरेनियम का बहुत ऊँचा घनत्व है, को एल्युमिनियम में विक्षेपित किया जाता है तथा इस प्रकार के ईंधन का निर्माण प्लेट के रूप में धातुकर्मीय प्रक्रियाओं द्वारा किया जाता है। ईंधन निर्माण कार्य में यह एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है तथा इस प्रकार के ईंधन के उपयोग उच्चतम कोटि के बहुउद्देशीय न्यूट्रॉन स्रोत वाले रिएक्टरों कि स्थापना में किया जायेगा।

ऑक्साइड आधारित ईंधन

धातु एवं मिश्र–धातु आधारित ईंधन की तुलना में यूरेनियम, प्लूटोनियम एवं थोरियम ऑक्साइडों से निर्मित ईंधन अधिक उपयोगी सिद्ध हुये हैं। इन ऑक्साइड ईंधनों के गलनांक अपेक्षाकृत अधिक ऊँचे होते हैं। इनके आकार साधारण ताप से गलनांक तक समदैशिक गुण दर्शाते हैं तथा साथ ही आवरण पदार्थो (जिरकोलाय तथा स्टेनलेस स्टील) के साथ इनकी रासायनिक स्थिरता बहुत अच्छी रहती है। अतः विभिन्न प्रकार के ऑक्साइड ईंधन, जिनमें यूरेनियम डाइऑक्साइड तथा यूरेनियम एवं प्लूटोनियम डाई–मिश्रित ऑक्साइड मुख्य है, का उपयोग भारतीय शक्ति रिएक्टरों के लिये विवादहीन विषय है। लाभदायक गुणधर्मों के कारण इन ऑक्साइड आधारित ईंधनों का उपयोग लगभग समूचे विश्व में संचालित शक्ति उत्पादन रिएक्टरों में किया जा रहा है। यूरेनियम ऑक्साइड आधारित ईंधन का विकास कार्य भारत में 1960 के दशक के आरम्भ में भाभा परमाणु अनुंसधान केन्द्र मुंबई में हुआ। सर्वप्रथम यूरेनियम ऑक्साइड प्लेटों का उत्पादन एल्युमिनियम आवरण वाले ईंधन पिन के निर्माण में जरलीना नाम के रिएक्टर के लिये किया गया। इस प्रौद्योगिकी विकास कार्य के अनुभव को बाद में राजस्थान परमाणु विद्युत उत्पादन केंन्द्र, की प्रथम यूनिट के लिये ईंधन तैयार करने में भी किया गया। आज हमारे देश में यूरेनियम ऑक्साइड ईंधन का लगभग 460 टन उत्पादन, नाभिकीय ईंधन समिश्र, हैदराबाद में किया जा रहा है। यह ईंधन उत्पादन लगभग बारह भारतीय शक्ति रिएक्टरों की ईंधन पूर्ति करता है।

यूरेनियम ऑक्साइड ईंधन

दाबित भारी पानी रिएक्टरों के लिये प्राकृतिक यूरेनियम ऑक्साइड ईंधन का निर्माण उच्च घनत्व, लघुव्यास, तथा कम लंम्बाई वाली बेलनाकार टिकियों के रूप में किया जाता है। निर्माण कार्य के दौरान परम्परागत पाउडर चूर्ण धातुकर्मीय "कोल्ड काम्पेक्शन" एवं उच्च ताप एवं अवकारिक वातावरण में सिन्टरिंग विधियों को अपनाया जाता है। तदपुरान्त इन टिकियों को लम्बी, पतली एवं सीधी जिरकोलाय आवरण नलिकाओं में भर दिया जाता है। इन नलिकाओं में उच्च चालकता वाली हीलियम गैस को टिकियों के साथ नलिकाओं में भरकर नलिकाओं के दोनों सिरों पर वेल्डिंग किया जाता है। उच्च चालकता वाला हीलियम गैस रिएक्टर प्रचालन के दौरान टिकियों में उत्पन्न तापीय ऊर्जा को आवरण तक अन्तरण करने में सहायक होती है। उच्च शुद्धता एवं उत्कृष्ट शुद्धता वाले यूरेनियम–डाइऑक्साइड ईंधन का निर्माण एक जटिल एवं चुनौती भरा कार्य है। यह अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि ईंधन टिकियों के निर्माण में उपयुक्त यूरेनियम डाइऑक्साइड चूर्ण में अधिकतम धात्विक अशुद्धियां 900 माइक्रोग्राम प्रति ग्राम ईंधन में होनी

चाहिये। अतः यूरेनियम डाइऑक्साइड को तैयार करने के लिये विशेष रासायनिक एवं धातुकर्मीय विधियों का पालन करना अति आवश्यक है।

यूरेनियम, प्लूटोनियम तथा मिश्रित आक्साइड ईंधन

यूरेनियम ऑक्साइड एवं प्लूटोनियम आक्साइड के मिश्रण से निर्मित मिश्रित आक्साइड ईंधन का उपयोग तापीय एवं तीव्र प्रजनन रिएक्टरों में किया जाता है। दोनों प्रकार के रिएक्टरों के ईंधन में उच्च मात्रा वाले विखंडनशील पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है। यूरेनियम तथा प्लूटोनियम ऑक्साइडों के भौतिक तथा रासायनिक गुण एवं उनकी संरचना लगभग समान होती है तथा साथ ही दोनों ऑक्साइड एक दूसरे के साथ संभावित मिश्रणों में ठोस विलयन बना सकते है। दोनों ऑक्साइडों को सही मात्रा में तोलकर उनका सर्वप्रथम संमिश्रण धातुकर्मीय विधियों द्वारा किया जाता है। इस मिश्रण प्रक्रिया से दोनों ऑक्साइड एक दूसरे के साथ समान गुणधर्म वाले ठोस विलयन बनाते हैं। यूरेनियम तथा प्लूटोनियम के ऑक्साइड ईंधन का निर्माण मूलतः यूरेनियम ऑक्साइड से मिलता–जुलता है। किन्तु प्लूटोनियम जो कि अपने आप में एक रेडियोधर्मी विषैला एवं खतरनाक पदार्थ है, के कारण मिश्रित ऑक्साइड ईंधन निर्माण कार्य जटिल होने के साथ–साथ चुनौतीपूर्ण है। निर्माण का अधिकांश कार्य सुरक्षा का विशेष ध्यान रखकर ग्लवबक्सों के अन्दर किया जाता है। इन ग्लवबक्सों के अन्दर का दबाव वातावरणीय अथवा बाहर के दबाव से कम रखा जाता है। इसके साथ–साथ वायुसंचालन की एक विशेष गति इन ग्लवबक्सों में रखा जाता है ताकि किसी भी असामान्य परिस्थिति में रेडियोधर्मी पदार्थ प्रयोगशाला के वातावरण में न आ सकें। यह रेडियोधर्मी प्रयोगशाला का संचालन सुरक्षा के उच्चतम मापदंडों के आधार पर होता है।

ईंधन गुणवत्ता निर्धारण

किसी भी ईंधन की सफलता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि पूर्वनिर्धारत विभिन्न विनिदर्शनों को ईंधन के निर्माण के दौरान तथा उसे रिएक्टर में भरने के पूर्व कितनी सत्यतापूर्वक अपनाते हैं। हम जानते हैं कि नाभिकीय ईंधन में भारी पदार्थ (यूरेनियम, प्लूटोनियम आदि) की सही मात्रा भारी तत्व के सभी समस्थानिकों की मात्रा, तथा विभिन्न प्रकार की अशुद्धियां ईंधन में पूर्वनिर्धारत विनिदर्शनों के आधार पर सही है अथवा नही। अशुद्धियों में, धात्विक,(ट्रान्जीशनल तथा रेअरअर्थ्स) अधात्विक, (कार्बन, नाइट्रोजन, हॅलोजन, ऑक्सीजन आदि) तथा न्यूट्रॉन अवशोषण करने वाले तत्व (बोरान,कैडमियम आदि) महत्त्वपूर्ण हैं। ये अशुद्धियां ईंधन निर्माण के दौरान उपयुक्त रसायनों, अथवा संसाधन संयत्रों से ईंधन पदार्थ में प्रवेश कर सकती है। अतः ईंधन निर्माण के दौरान तथा अन्त में इन सभी अशुद्धियों का सही मापन विभिन्न रासायनिक, भौतिक विश्लेशण विधियों द्वारा किया जाता है। यहां हम यह भली भांति समझ लें कि भारी तत्व (यूरेनियम आदि,) यदि निर्धारित मात्रा से अधिक हैं तो इसका सीधा प्रभाव नाभिकीय प्रक्रिया की गति पर पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न प्रकार की धात्विक अशुद्धियां भारी तत्वों के साथ उच्चताप पर अन्तरधात्वीय पदार्थ बना सकते हैं तथा साथ–साथ निष्पादित न्यूट्रॉनों का अवशोषण कर, रिएक्टर संचालन में शक्ति उत्पादन को गतिरोध दे सकते हैं। इसी प्रकार अधात्विक अशुद्धियां विशेषतः हैलोजन, ईंधन आवरण को हानि पहुंचा सकते है। अतः किसी भी ईंधन को रिएक्टर में भरने से पहले तथा निर्माण के दौरान ईंधन गुणवत्ता निर्धारण एक अति महत्वपूर्ण कार्यक्रम है।

अभिस्वीकृति– लेखक, डा. वी. वेणुगोपाल अध्यक्ष, ईंधन रसायनिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंन्द्र मुबंई का अत्यन्त आभारी है, जिन्होंने इस लेख को लिखने में प्रोत्साहित किया।

प्रो0 निगम ने अकादमिक रसायन के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का शोध कार्य किया है।

प्रो0 एस.एम खोपकर
पूर्व आचार्य, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई

प्रो0 निगम ने देश के युवा रसायनज्ञों को सदैव प्रोत्साहित किया है।

प्रो0 समरेश मित्रा
टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फन्डामेन्टल रिसर्च, मुंबई

आचार्य डा0 हीरालाल निगमः कुछ व्यक्तिगत संस्मरण

डा0 आर0सी0 मेहरोत्रा

लेखक लब्ध प्रतिष्ठ रसायन वैज्ञानिक हैं। जयपुर विश्वविद्यालय में रसायन विभाग के विभागाध्यक्ष तथा जयपुर, दिल्ली एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालयों के कुलपति रहे हैं।

डा0 हीरालाल निगम से मेरा परिचय पिछले 60 वर्षों से है। वे मेरे शिष्य, मेरे मित्र, मेरे सहयोगी, मेरे सहकर्मी सभी रहे हैं। मेरा उनका प्रथम परिचय सन 1944 जुलाई में हुआ था। जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान विभाग में शिक्षक नियुक्त हुआ। हीरालाल निगम उन दिनों एम0एस-सी0 फाइनल के छात्र थे। उनके साथ कुशाग्र बुद्धि वाले अनेक सहपाठी थे जिनमें प्रमुख थे- रमेशचन्द्र कपूर, बल्देव बिहारी लाल सक्सेना, मोहन चन्द्र पन्त और अजय कुमार बोस आदि। ये सभी उनके और मेरे भी आजीवन मित्र बने रहे।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ख्याति उस समय चरम पर थी। निगम जी ने प्रोफेसर नील रत्न धर के निर्देशन में अनुसन्धान कर डी0फिल0 की डिग्री प्राप्त की और विश्वविद्यालय में प्रवक्ता के पद पर उनकी नियुक्ति हो गई। 1956 में इंग्लैण्ड के श्रेष्ठ अकार्बनिक रसायनज्ञ प्रोफेसर रोनॉल्ड नाइहोम ने उन्हें लन्दन के युनीवर्सिटी कालेज में शोध के लिये आमंत्रित किया। उल्लेखनीय है कि मात्र दो वर्षों में डा0 निगम ने लन्दन विश्वविद्यालय की पीएच.डी. उपाधि अर्जित कर ली।

डा0 नाइहोम से मेरी अच्छी मित्रता थी। उन दिनो मुझे कई बार लन्दन जाने का अवसर मिला। हर बार मैं युनीवर्सिटी कालेज में प्रोफेसर नाइहोम के दर्शन अवश्य करता था। वे मुझे हर बार टॉटेन होम कोर्ट के किसी भारतीय रेस्टोरैन्ट में भोजन के लिए अवश्य ले जाते थे। एक बार डा0 निगम भी हमारे साथ लंच पर गए। भोजन के समय हरी मटर की सब्जी की प्लेट डा0 निगम की ओर बढ़ाते हुए प्रोफेसर नाइहोम बोले "Hey, chemist with green fingers, do justice with these green vegetables too" मैं कुछ समझ नहीं पाया। मेरे चेहरे पर आश्चर्य का भाव देख कर डा0 नाइहोम ने समझाया कि डा0 नाइगाम जी ने हमारे डाई-अर्सीन लिगैण्ड के आइरन(I) तथा मॉलिब्डनम(II) के व्युत्पन्न संश्लेषित करने में ऐसी अनूठी सफलता अर्जित की है कि हमारे सहयोगी उन्हें बीमउपेज ूपजी हतममद पिदहमते के नाम से पुकारने लगे हैं।

स्वदेश लौटकर डा0 निगम ने इलाहाबाद की अति सीमित सुविधाओं में भी संकुल रसायन के क्षेत्र में धातु-सल्फर बन्धक वाले यौगिकों पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का अनुसन्धान किया। इसके अतिरिक्त पोलैरोग्राफी, एक्स-रे अवशोषण स्पेक्ट्रॉस्कोपी तथा सिन्क्रोट्रान रेडियेशन ऐसे नवीनतम विषयों पर बहुत उच्च कोटि का कार्य सम्पन्न किया। अपने उत्कृष्ट शोध का वर्णन करने के लिए उन्हें कई बार प्रसिद्ध इण्टरनेशनल कोआर्डिनेशन कैमेस्ट्री कॉन्फ्रेंस में व्याख्यान हेतु आमंत्रण मिला। इसी कड़ी में 1987 की नान्जिंग (चीन) की इण्टरनेशनल कोऑर्डिनेशन कैमिस्ट्री कान्फ्रेंस में उन्होने 'एक्स-रे अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोपी पर विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान दिया। उनका यह व्याख्यान प्योर ऐण्ड एप्लाइड कैमिस्ट्री

(1988) के 60वें अंक में छापा।

देश की सब से पुरानी अकादमी नेशनल अकादमी ऑफ साइंसेज, इलाहाबाद के वह सन 1951 में ही फेलो निर्वाचित हो गए थे। इस अकादमी में वे कौंसिल मेम्बर, विदेश सचिव तथा कोषाध्यक्ष के पदों पर भी कार्य किये। इसी प्रकार दिल्ली की इण्डियन नेशनल साइंस अकादमी (INSA) के फेलो के रूप में उनका निर्वाचन से सन 1976 में हुआ। डा0 निगम दो बार देश की इस उच्चतम अकादमी के कौंसिल के सदस्य के रूप में कार्य किये। यहाँ मेरा उनका साथ रहा और मुझे अनेक अवसर पर उनके स्पष्टवादी स्वाभाव एवं दृढ़ इच्छाशक्ति के दृष्टान्त देखने को मिले।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के व्याख्याता, उपाचार्य और आचार्य की सार्थक और सफल पारी खेलने के बाद डा0 निगम अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा के कुलपति बने। उन्होंने उस विश्वविद्यालय को प्रगति के अनेक सोपान पार कराने में आश्चर्यजनक सफलता पाई। शैक्षणिक प्रशासन की यह एक अनूठी उपलब्धि मानी जा सकती है। इस अवधि में मुझे और मेरी श्रीमती को उन्होंने रीवा आमंत्रित किया। वहाँ हमें उनके आतिथ्य का आनन्द मिला। विश्वविद्यालय प्रशासन में उनकी कुशलता की अनेक मिसालें हमने वहाँ देखीं। उनके अत्यन्त प्रिय शिष्य प्रोफेसर कृष्ण बिहारी पाण्डेय से अपने दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति काल में मेरा अच्छा खासा परिचय हो गया था, परन्तु रीवा में उनकी कार्यकुशलता तथा आतिथ्य सत्कार की अनुभूति निकट से पाने का सुअवसर मिला। डा0 पाण्डेय प्रो0 निगम की ही कृपा से कानपुर विश्वविद्यालय के कुलपति बने और आजकल उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष हैं। अपने गुरु के आदर-भाव में वे उनकी 80वीं वर्षगाँठ पर आयोजित अभिनन्दन समारोह के प्रेरणा स्रोत भी हैं। अपने निकट सहयोगी डा0 वी0के0 माथुर से भी प्रोफेसर निगम की इतनी प्रशंसा सुन चुका हूँ कि हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। प्रोफेसर निगम ने गुरु-शिष्य सम्बन्धों की अलौकिक परम्परा स्थापित करने में सफलता प्राप्त की है।

लिखते-लिखते मैने अपनी श्रीमती जी को बतलाया कि मैं डा0 निगम के अभिनन्दन-प्रकाशन के लिए अपने संस्मरण लिख रहा हूँ। उन्होंने तुरन्त कहा "उनके मस्तीपन के स्वाभाव के बारे में लिखना न भूलियेगा"। सच है कि डा0 निगम की लोकप्रियता और अनूठी सफलता में उनके मस्तीपन के स्वाभाव का बहुत बड़ा योगदान है। साथ ही उनका परिवार भी उनके जीवन को सुखी और सन्तुष्ट बनाने में बहुत सहायक रहा है। गणित शास्त्र की विद्वान उनकी धर्मपत्नी प्रोफेसर डाक्टर स्नेहलता जी का स्वभाव भी अति मृदुल और सहयोग भावना से परिपूर्ण है। उनकी तीनों सन्तानों - इला, शिखा और आलोक ने उनसे उच्च कोटि के जीवन मूल्य ग्रहण किए हैं।

डा0 निगम का शिक्षक होने के नाते मैं इस अवसर पर उनको शतायु होने का आशीर्वाद देता हूँ और कामना करता हूँ कि उनके परिवारजनों और मित्रों को उनकी योग्यता और स्वभाव की सहजता का लाभ दशकों तक मिलता रहे। "हीरा" तो सदैव ही सबके लिए अमूल्य रहेगा।

प्रो0 निगम एक विख्यात शिक्षक तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के शोधकर्ता हैं। इण्डियन केकिमल सोसाइटी तथा इण्डियन साइन्स कांग्रेस के प्रति उनके अवदानों के लिए रसायनविदों में उनके प्रति अगाध सम्मान है।

– प्रो0 वहीदुद्दीन मलिक, पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

कर्मठ एवं समर्पित व्यक्तित्व के धनी प्रो0 हीरालाल निगम एक आदर्श शिक्षक रहे। ओजस्वी, सहृदय, दृढ़ संकल्पित शिक्षक के रूप में उन्होंने युवाओं का मार्गदर्शन किया। उनका अभिनन्दन एक महान शिक्षक का अभिनन्दन है।

– प्रो0 एम.एम. ललोरिया, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

मेरे अभिन्न मित्र डॉ0 हीरालाल निगम

प्रो0 बी.बी.एल. सक्सेना

लेखक प्रोफेसर निगम के सहपाठी हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायन विभाग के विभागाध्यक्ष तथा मेरठ एवं आगरा विश्वविद्यालयों के कुलपति रहे हैं।

80 वर्ष के नवयुवक डॉ0 हीरा लाल निगम को शत शत बधाई के साथ भगवान से प्रार्थना है कि वह न केवल जीवन का शतक पूरा करें वरन् उसके आगे भी अपनी सेवाओं से मातृभूमि को लाभान्वित करते रहें।

यह मेरा परम सौभाग्य है कि मेरा उनसे 60 वर्षों से भी अधिक का अतिनिकटता का सम्बन्ध रहा है। हम दोनों ही जुलाई 1942 को इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में बी.एससी. प्रथम वर्ष में प्रवेश हेतु आए तथा संयोग से हम दोनों ने एक ही सेक्शन में प्रवेश पाया।

1942 के उस क्रांति काल का भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अत्यन्त गौरवशील स्थान है। कहा जाता है कि नाम का बड़ा भारी प्रभाव मनुष्य के गुणों व व्यक्तित्व पर भी पड़ता है। यह सत्य आपको प्रो0 निगम के व्यक्तित्व में देखने को मिलेगा। जैसा नाम है हीरा लाल वैसे ही रत्नों की खान आप उनके व्यक्तित्व में पावेंगे। आप आए भी ऐसे क्षेत्र से थे– रीवा (मध्य प्रदेश) जो पन्ना (मध्य प्रदेश) के अतिनिकट होने से हीरा और लाल दोनों रत्नों का भंडार है। वह उस स्थान से अकेले नहीं आए थे, उसी स्थान से एक अन्य स्वतंत्रता उन्मादी संग्रामी स्वर्गीय शहीद लाल पद्मधर भी आया था और 12 अगस्त 1942 को जब हम लोगों का जुलूस इलाहाबाद की कचहरी पर पहुँचा और हम लोगों पर अंग्रेजों की गोलियाँ चलीं उसमें लाल पद्मधर शहीद हो गया। उसे लेकर हम लोग यूनिवर्सिटी के अस्पताल में आए थे। तब कई महीनों हम सब की पढ़ाई लिखाई, निवास आदि सब अस्त व्यस्त रहे। बहुधा गुप्त प्रवास करना पड़ा। शनैः शनैः हम लोगों ने बी.एससी. प्रथम वर्ष पास किया।

इस भाँति B.Sc., M.Sc., D. Phil तक हम दोनों ही सहपाठी रहे। इन्होंने M.Sc. (Final) में अकार्बनिक रसायन शास्त्र में विशेषता प्राप्त की किन्तु D.Phil में हम दोनों ही विश्वविख्यात रसायन शास्त्री के महान धुरंधर गुरु प्रो0 नील रत्न धर के शिष्य बने। ऐसे गुरु की शरण और छत्रछाया में रसायन शास्त्र के अतिरिक्त जीवन के अन्य मूल्यों की भी शिक्षा पाई। प्रो0 धर साहब का शिष्य होना साधारण बात नहीं थी। वह स्वयं अत्यन्त परिश्रमी थे व वेशभूषा, लिबास, पहनावा, रहन सहन में सरलता की पराकाष्ठा थे। वैसा ही वह अपने छात्रों को अपने अनुरूप बनाना चाहते थे। वह स्वयं प्रातः 8 बजे तक विभाग में आकर हम लोगों से हमारे प्रयोगों की विवेचना करते तथा देर रात तक विभाग में रहते थे। कभी कभी देर रात को भी चक्कर लगा लेते थे। हम लोग उनका अत्यधिक आदर करते थे। मई जून तक के मास में कई बार प्रातः 5 बजे से रात के 2 बजे तक अनेकों दिन हम लोगों को शोधकार्य करना होता था। क्योंकि प्रातः धर साहब के आने पर उनके बताए समस्त प्रयोगों के परिणाम की चर्चा होनी होती थी। प्रयोगशाला में लू लपट, व भीषण ग्रीष्म काल की तपन के अतिरिक्त आटोक्लेव भी चढ़े होते थे जिस हेतु भट्टी के समान तपती प्रयोगशाला में रहना होता

था। हम लोगों को किसी प्रकार की छात्रवृत्ति नहीं मिलती थी। इतनी कठिन तपस्या में तपे हमारे सहपाठी प्रो0 हीरा लाल निगम निखर कर निकले। अत्यन्त मेधावी छात्र होने के कारण D.Phil करने के पूर्व ही 1947 में आपकी नियुक्ति शीला धर संस्थान में रसायन शास्त्र के प्रवक्ता के रूप में हो गई।

कुछ वर्ष उपरान्त डॉ0 निगम साहब विलायत (England) प्रो0 नाइहोम के साथ अति उल्लेखनीय शोधकार्य कर वापस रसायन विभाग में आ गए तथा अनेक छात्र आपके शोधछात्र होने के लिए लालायित रहते थे। विश्वविद्यालय के नियमों से बंधने के कारण प्रत्येक वर्ष वह कुछ ही अत्यन्त मेधावी छात्रों को प्रवेश दे पाते थे किन्तु उनके साथ काम करने के उपरान्त उनके छात्र बड़े बड़े ऊँचे स्थानों पर नियुक्ति पाते थे। कुछ कुलपति हुए। डॉ0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय जी तो उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष हैं। देश विदेशों में शोध सम्बंधित उच्चकोटि की अन्तर्राष्ट्रीय असंख्य संगोष्ठियों के निमंत्रण स्वीकार कर उनमें अध्ययन पद अथवा शोधपत्र प्रस्तुत करने हेतु भाग लेकर आपने उन्हें अनुग्रहित किया। अपने शोध कार्यों के आधार पर आपको भारत में विज्ञान जगत का सर्वोच्च सम्मान F.N.A. से अलंकृत किया गया।

डॉ0 निगम का व्यक्तित्व बहुमुखी रहा है। आप रीवा विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे तथा अनेकों कुलपति चयन समितियों एव अन्य उच्च पदों की चयन समितियों के सक्रिय सदस्य रहे हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में भी आपने पढ़ाई लिखाई के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी योगदान दिया। 6 वर्ष तक डायमंड जुबली छात्रावास के अधीक्षक रहे। बागवानी में भी आपकी बड़ी रुचि थी जिससे छात्रावास का अलंकरण करने में आपकी पूरी भूमिका रही। आपकी हिन्दी भाषा में बड़ी रुचि रही व पत्रकारिता में भी आप निपुण थे। मृदुल स्वभाव, सेवा एवं सहायता करने को तत्पर रहने से आपके मित्रों की लम्बी सूची है। हमारे मित्र प्रो0 हीरा लाल निगम अत्यन्त साहसी, कर्मनिष्ठ, कर्तव्यपरायण, परिश्रमी, विशाल हृदय, मृदुभाषी, प्रखर बुद्धि, अति विद्वान हैं।

"तुम जिओ बरस हज़ार, हर बरस में दिन हों पचास हज़ार"

गौरवशाली शिष्य परंपरा

प्रो0 हीरालाल निगम ने अपने शिष्यों को संतान समझकर प्यार दिया। स्नेह से सींचे वे पौधे अब वृक्ष बन गए हैं। उनके सभी शिष्य शिक्षा, प्रशासन, व्यवसाय तथा राजनीति में उच्च पदों पर हैं। प्रयाग विश्वविद्यालय से डी.फिल. उपाधि पाए उनके शिष्यों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं :

डॉ0 उमा कपूर (1961)
डॉ0 टी.डी. सेठ (1964)
डॉ0 मीरा अस्थाना (1965)
डॉ0 बी.सी. नायर (1965)
डॉ0 मुकुन्द बिहारी मिश्रा (1967)
डॉ0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय (1969)
डॉ0 प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव (1971)
डॉ0 सतीश कुमार श्रीवास्तव (1972)
डॉ0 विजय कृष्ण (1975)
डॉ0 महेन्द्र सिंह वर्मा (1977)
डॉ0 इला निगम (1979)
डॉ0 पुष्पेन्द्र कुमार (1986)

डॉ0 वी.के. माथुर (1963)
डॉ0 सुभाष चन्द्र सिन्हा (1965)
डॉ0 अमरनाथ कुमार (1965)
डॉ0 प्रकाश चन्द्र जैन (1967)
डॉ0 चित्रा मुखर्जी (1968)
डॉ0 कृष्ण मोहन कन्त (1970)
डॉ0 उमेश चन्द्र श्रीवास्तव (1972)
डॉ0 हरस्वरूप शर्मा (1973)
डॉ0 जगदीश प्रसाद (1976)
डॉ0 शिव शंकर सिंह (1977)
डॉ0 विनीता श्रीवास्तव (1983)

प्रो0 हीरालाल निगमः लन्दन विश्वविद्यालय में

प्रो0 एल0डी0 दवे

लेखक प्रोफेसर निगम के अभिन्न मित्र हैं। वे भावनगर विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर तथा कुलपति रह चुके हैं।

परम मित्र प्रो0 निगम के जीवन के अस्सी वर्ष पूरा करने के उपलक्ष्य में आयोजित सम्मान कार्यक्रम में अपने अन्य मित्रों के साथ स्वयं को सम्मिलित करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है।

वर्ष 1956-57 को याद कर आज मुझे बड़ी खुशी हो रही है। तब मैं पहली बार इंग्लैण्ड में प्रो0 निगम से मिला था। उस समय वे युनिवर्सिटी कालेज लन्दन में विश्व के शीर्ष अकार्बनिक रसायनविद् प्रो0 आर0एस0 नाइहोम के साथ अपना शोध कार्य कर रहे थे और मैं इम्पीरियल कालेज में प्रख्यात वैज्ञानिक प्रो0 जी विल्किन्सन के निदेर्शन में अपनी पी-एच0डी0 उपाधि के लिए कार्य कर रहा था। उन दिनों हम लोग प्रायः एक दूसरे से मिला करते थे और अपने शोध कार्यों की चर्चा किया करते थे। मुझे वह दिन भूलता नहीं जब प्रो0 निगम एक बार मेरी प्रयोगशाला में मुझसे मिलने आये और उसी समय प्रो0 विल्किन्सन भी वहाँ पहुँच गये। प्रो0 निगम को देख कर उन्होंने पूछा कि वे कहाँ कार्य कर रहे हैं। निगम साहब के यह उत्तर देने पर कि वे युनिवर्सिटी कालेज लन्दन में प्रो0 नाइहोम के निर्देशन में काम कर रहे हैं प्रो0 विल्किन्सन बोले "Oh, you are at the other place" इस घटना को याद कर आज भी मैं आश्चर्य में पड़ जाता हूँ।

प्रो0 निगम एक गर्म-जोश और सहृदय इन्सान हैं। उन्हें लोगों के साथ घुलने-मिलने में समय नहीं लगता। वह जितनी तत्परता से मित्र बनाते हैं उतनी ही तत्परता से मित्रता का निर्वाह भी करते हैं। 1955- 57 में जब प्रो0 निगम युनिवर्सिटी कालेज लन्दन में अपना शोध कार्य पूरा कर रहे थे, वह समय अकार्बनिक रसायन विज्ञान के पुनर्जागरण का काल था। उन दिनों विभाग में उनके गुरु प्रो0 नाइहोम के अलावा अन्य अनेक श्रेष्ठ विद्वान थे, जिनमें प्रो0 डी0पी0 क्रेग, प्रो0 जैक लुईस, प्रो0 बी0एन0 फिगिस, प्रो0 एम0 टोब, प्रो0 टी0एम0 डन, प्रो0 जिलेस्पी आदि प्रमुख थे। प्रो0 निगम की इन सभी से प्रगाढ़ मित्रता थी। इम्पीरियल कालेज में भी उनके अनेक प्रशंसक एवं मित्र रहे, जिनमें प्रो0 डेनिस एफ इवान्स का नाम उल्लेखनीय है।

उनके शोध का विषय मोलिबडेनम के डाई आर्सीन यौगिकों से संबंधित था। इस कार्य में उन्हें घातक आर्सेनिक लीगण्ड तैयार करने पड़ते थे। आर्सेनिक स्वयं में एक विष-धातु है उसके लगभग सभी यौगिक विषकारी प्रभाव वाले होते हैं। ऐसे में प्रयोगशाला में आर्सीन लीगैण्डों का संश्लेषण करना बड़ा जोखिम का काम है। शरीर में अधिक आर्सेनिक पहुँचने से अनेक विकार उत्पन्न होते हैं। डा0 निगम ने वह जोखिम उठाया। प्रति सप्ताह उनके नाखूनों की जाँच होती थी और यह पता लगाया जाता था कि उनके शरीर में आर्सेनिक की मात्रा खतरे के स्तर को पार तो नहीं कर रही है। अपनों से दूर परदेश में ऐसा जोखिम उठाना उनकी दृढ़ इच्छा-शक्ति का परिचायक है और देश की नौजवान पीढ़ी को एक संदेश है। अन्ततः उन्होने वे सभी यौगिक बना डाले जिन्हें बनाने में प्रो0 नाइहोम के अन्य शिष्य असफल रहे थे। तभी तो प्रो0 नाइहोम ने उन्हे अपना प्रियतम शिष्य माना और 'Chemist with green fingers' की उपाधि दी। प्रोफेसर नाइहोम सन 1957 में रोम की अन्तर्राष्ट्रीय कोआर्डिनेशन केमेस्ट्री कान्फ्रेन्स में व्याख्यान देने गये तो डा0 निगम को अपने साथ ले गये और दुनिया के अनेक बड़े रसायन वैज्ञानिकों से प्रशंसा पूर्वक उनका परिचय कराया।

प्रो0 निगम का जीवन एक आदर्श शोधार्थी एवं आदर्श शिक्षक का जीवन रहा है। इस अवसर पर मैं उनके शतायु होने की कामना करता हूँ।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो0 हीरालाल निगम

प्रो0 शिव बहादुर सिंह

प्रकृति के विधान के अनुरूप ही संसार में लोग जन्म और मृत्यु को धारण करते हैं। पर संसार में उसी व्यक्ति का जन्म सार्थक होता है जिसके जन्म लेने से कुल या राष्ट्र की समुन्नति होती है। इस तथ्य की पुष्टि प्रस्तुत श्लोक में भी प्रतिपादित होती है-

परिवर्तिनि संसारेमृतः को वा न जायते,
स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम।

प्रो0 हीरालाल निगम विगत आठ दशकों की अपनी जीवन यात्रा के दौरान अनेक उत्कृष्ट कार्यों के द्वारा राष्ट्र की समुन्नति में प्राण-प्रण से तल्लीन रहे हैं। प्रो0 निगम एक प्रखर अध्येता ही नहीं, बल्कि प्रबुद्ध अध्यापक, निपुण प्रशासक, अद्भुत वैज्ञानिक, सहृदय मानव, चिन्तक, शोध प्रज्ञक और तार्किकता आदि विशिष्टताओं से सम्पन्न हैं। निगम जी के व्यक्तित्व में दया, सत्य, सहानुभूति, संवेदनशीलता, विनयशीलता, सदाचार, शिष्टता और शांति आदि मानवीय गुण स्वाभाविक रूप से परिलक्षित होते हैं।

प्रो0 निगम एक श्रेष्ठ शिक्षक के रूप मे विद्यार्थियों के लिए गुरु की महत्ता को स्थापित करते रहे। उनकी शिक्षण कला, शिक्षण प्रक्रिया, विषय बोध एवं प्रायोगिक स्वरूप की मार्मिकता विद्यार्थियों के बीच में विषय के प्रति स्वाभाविक रुचि उत्पन्न कर देती थी।

ए0पी0एस0 विश्वविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश में कुलपति के रूप में अपने छः वर्षों के कार्यकाल में प्रो0 निगम ने अपनी प्रशासनिक क्षमता, सूझ-बूझ और पारखी दृष्टि से विश्वविद्यालय को शैक्षणिक उपलब्धियों के क्षेत्र मे अग्रणी कर दिया। प्रो0 निगम के कार्यकाल में विश्वविद्यालय में कई नवीन विभागों एवं संस्थानों की स्थापना हुई। प्रो0 निगम को उनकी शैक्षणिक उत्कृष्टताओं के कारण समय-समय पर राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय सम्मान भी प्राप्त हुए हैं।

लखनऊ विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति में कुलाधिपति द्वारा नामित सदस्य के रूप मे प्रो0 निगम की कार्य पद्धति, नियमों की गहन जानकारी, आचरण कर्मठता और करुणाप्रद भावना से बहुत कुछ सीखने और समझने का अवसर मिला। विश्वविद्यालय के अकादमिक एवं प्रशासनिक कार्यों के दीर्घकालीन अनुभव के कारण वे समय-समय पर अपने विचारवान सुझावों से हम लोगों का मार्ग दर्शन करते रहे हैं। अंशकालिक अध्यापकों की व्यावहारिक एवं नियमगत समस्याओं के निराकरण में अपने प्रतिवेदन के माध्यम से उन्होंने सराहनीय योगदान किया। इसी प्रकार विश्वविद्यालय के प्रबन्ध अध्ययन संस्थान के परिमार्जन में भी उनका महान योगदान है। वे अपनी न्यायप्रियता, सक्रियता एवं समुचित व्यवहारोचित निर्णयों से कार्यकारिणी को सतत प्रभावित करते रहे हैं।

इस अवसर पर हम सभी की यही शुभकामना है कि स्वस्थतन, स्वस्थमन और स्वस्थ चेतना के साथ प्रो0 निगम अविराम अपने अध्ययन-अनुशीलन-अनुसंधान में तत्पर रहने के साथ चिरायु हों।

कुलपति
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

भाग्य से मिलता है ऐसा गुरु

डा0 वी0के0 माथुर

लेखक प्रोफेसर निगम के शिष्य हैं। उन्होंने अनेक वर्षों तक अमेरिका तथा इंग्लैंड में शोध कार्य किया। लौटकर जयपुर विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। तत्पश्चात् तन्जानिया, ईराक, मलेशिया एवं लाइबेरिया आदि देशों में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर रहे।

एम0एस-सी0 उत्तीर्ण कर मैंने डा0 हीरालाल निगम के निर्देशन में शोध कार्य प्रारम्भ किया। उनके शोध-छात्र के रूप में मुझे उनके अनेक रूपों के दर्शन हुए। संघर्ष के क्षणों में वे बड़े भाई की तरह आगे-आगे चलकर राह दिखाते थे। पिता की तरह हमें अनुशासन में रखने के लिए वे कभी कुछ बोलते नहीं थे, उनकी नजर ही हमें बहुत कुछ बता देती थी। विज्ञान और रसायन विज्ञान में दुनिया में क्या कुछ हो रहा है इस पर जब वे बोलने लगते थे तो हमें उनके परम ज्ञानी स्वरूप का दर्शन होता था। और जब कभी हम संकट में होते थे, उनसे मातृवत स्नेह प्राप्त होता था।

डा0 निगम के साथ शोध छात्र के रूप में कार्य करते हुए लगभग साल भर हुआ था। तभी उनके श्वसुर गम्भीर रूप से बीमार पड़े और इलाज के लिए उन्हे बम्बई ले जाना पड़ा। मैं भी साथ गया मुझे कुल एक माह इस निमित्त बम्बई में रहना पड़ा। डा0 निगम को इस बात की बहुत चिन्ता हो रही थी कि मेरे इस प्रकार बम्बई में रहने के कारण मेरा शोध कार्य पिछड़ रहा है। किन्तु कठिनाई के इस मुकाम को उन्होने किस तरह एक अवसर में परिवर्तित कर दिया, यह अनुकरणीय है। बिना मुझसे बताये उन्होने टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेन्टल रिसर्च में डा0 सी0आर0 कनेकर से बात की और चुम्बकीय रसायन विषय पर मेरे लिए शोध कार्य की व्यवस्था कर दी। इधर उन्हे इलाहाबाद लौटना था और मेरे लिए आदेश हुआ कि मैं बम्बई में रुक कर टाटा इन्स्टीट्यूट में अपना शोध कार्य करूँ। चुम्बकीय रसायन मेरे लिए नितान्त नया विषय था। भोजन के उपरान्त रात्रि 10 बजे से सुबह 3 बजे तक उन्होने मुझे चुम्बकीय रसायन का एक-एक अक्षर पढ़ाया और यह कहकर छोड़ा कि इसके बाद इस विषय को मैं इतना पढ़ूँ कि आगे स्वयं उन्हें पढ़ा सकूँ। अपने हर शोध-छात्र को उन्होंने एक-एक विषय इसी तरह पढ़ाया, और सभी के लिए यही कहते थे कि अमुक विषय पर इनका मुझसे ज्यादा अधिकार है। हमने कभी गुरुवर को संस्कृत की यह सूक्ति बोलते नहीं सुना पर अपने हर शिष्य के लिये उनके मन में यही भाव होता था-

सर्वः विजयमिच्छेत्, पुत्रात् शिष्यात् पराजयेत्।

टाटा इन्स्टीट्यूट भारत की तो सर्वश्रेष्ठ शोध संस्था है ही, विश्व की श्रेष्ठतम संस्थाओं में भी इसकी गणना होती है। इस प्रकार गुरु-कृपा से मुझे इस श्रेष्ठतम संस्था में शोध करने का अवसर प्राप्त हुआ। संयोग से इस शोध में जो शोध परिणाम मुझे मिले वह चौंकाने वाले थे। अपनी समझ से मैने थायोमैलिक एसिड के साथ कोबाल्ट(III) का एक यौगिक बनाया था। कोबाल्ट(III) का यौगिक प्रतिचुम्बकीय होता है। पर हमारा यौगिक अनुचुम्बकीय निकला। इसलिए यह आशंका बनी कि यौगिक कोबाल्ट(II) का है। कोबाल्ट(II) यौगिक या तो हाई-स्पिन होता है और उसमें तीन अयुग्मित इलेक्ट्रान होते हैं अथवा लो-स्पिन होता है और उसमें एक अयुग्मित इलेक्ट्रान होता है। हाई-स्पिन

कोबाल्ट(II) का चुम्बकीय आघूर्ण लगभग 5.0 B.M. तथा लो-स्पिन कोबाल्ट(II) का 2.0 B.M. होता है। परन्तु हमारे यौगिक का जो चुम्बकीय आघूर्ण मिला उसका मान हाई-स्पिन तथा लो-स्पिन दोनों के बीच का था। यह और आसामान्य स्थिति थी। मैने बार-बार इस प्रयोग को दुहराया और हर बार वही परिणाम पाया। कुल मिलाकर मैं निराश था। या तो हमारा यौगिक ठीक नहीं बना है, या चुम्बकीय आघूर्ण की माप में कहीं गलती हुई है। इलाहाबाद आकर मैने यह परिणाम गुरुवर डा0 निगम के समक्ष रखा। उन्होंने मुझसे यौगिक की शीशी माँगी। स्वच्छ श्वेत कागज पर थोड़ा यौगिक गिरा कर परखा। चमकदार स्वस्थ क्रिस्टल। यौगिक निश्चित रूप से शुद्ध बना है। फिर टाटा इन्स्टीट्यूट में मेरे किये प्रयोग का पाठ्यांक जाँचा, स्वयं से परिकलन किया और मेरी पीठ थपथपाकर बोले-"तुम्हारा यौगिक न तो हाई-स्पिन है, न ही लो-स्पिन है, बल्कि इसमें हाई-स्पिन तथा लो-स्पिन के संतुलन की स्थिति है"। उस समय तक ऐसे बहुत कम उदाहरण ज्ञात थे। इसलिए हमारा शोध परिणाम तत्काल एक अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका में प्रकाशित हुआ। कालान्तर में मुझ से कनिष्ठ शोधार्थियों ने इस विषय का विस्तार से अध्ययन किया और उनके अनेक शोध पत्र राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में छपे।

सन् 1963 में डी0फिल0 पूरी करते ही मुझे अमेरिका में शोध हेतु छात्रवृत्ति मिल गयी। वहाँ सफलता पूर्वक अपना कार्य पूरा कर मैने मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में शोध छात्रवृत्ति (PDF) के लिए आवेदन किया। विदेशों में ऐसे आवेदनों के साथ पूर्व शोध निदेशक की अनुशंसा का बहुत महत्व होता है। उन दिनों मैं अमेरिका में था। मैने डा0 निगम को अनुशंसा सीधे मैनचेस्टर विश्वविद्यालय भेजने के लिए पत्र लिखा। तब फैक्स और ई-मेल का जमाना नहीं था। सामान्य पत्रों पर ही निर्भर रहना पड़ता था। अमेरिका से भेजा मेरा पत्र भारत में डा0 निगम को मिला। उन्होंने मेरे लिए अनुशंसा पत्र सीधे मैनचेस्टर विश्वविद्यालय भेजा और साथ ही मुझे भी इस बात की सूचना देते हुए पत्र लिखा। उनका पत्र मिलने से पहले ही मुझे मैनचेस्टर से नियुक्ति पत्र मिल गया। मेरे आवेदन पत्र में शोध निदेशक के रूप में डा0 हीरालाल निगम का नाम लिखा था। इतना पर्याप्त था। मैनचेस्टर विश्वविद्यालय ने मात्र इतना जानकर ही मेरा चयन कर लिया कि मैं डा0 निगम का छात्र हूँ। इतना सम्मान था डा0 निगम का वहाँ। अपने गुरु की कृपा से मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में मुझे डा0 जैक लूइस के साथ शोध कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वही डा0 जैक लूइस जो अपने परिश्रम और प्रतिभा के बल पर कालान्तर में **लार्ड जैक लूइस** बने।

इग्लैण्ड का हर रसायन वैज्ञानिक डा0 निगम को व्यक्तिगत रूप से जानता था और उनकी प्रतिभा से अभिभूत था। जहाँ भी मैं अपना परिचय डा0 निगम के छात्र के रूप में देता था, वहीं सम्मान के साथ यह सुनने को मिलता था"अच्छा! आप डा0 निगम के छात्र हैं"।

जीवन में ऐसा गुरु भाग्य से मिलता है। अपने गुरु के अस्सी वर्ष पूरे करने पर मैं उनके लिए "जीवेत् शरदः शतम्" की कामना करता हूँ।

मैं प्रो0 निगम को पिछले तीस वर्षों से जानता हूँ, उनके प्रति मेरे मन में आदर है। उनकी विद्वता, अध्यापनशीलता और व्यक्तिगत आचरण पूरी पीढ़ी के लिए प्रेरणादायी है। मुझे कुछ माह पूर्व लखनऊ में प्रो0 निगम से मिलने का अवसर मिला। उनके अच्छे स्वास्थ्य को देखकर मुझे सुखद आश्चर्य हुआ और मैंने उनसे इसका रहस्य पूछा। कुछ देर बाद भोजन के समय वे मेरे पास आए और कम मात्रा में सादा भोजन करने के लाभ बताने लगे। यही आत्मसंयम उनके अतिउत्तम शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का रहस्य है।

एस.पी. सिंह, एमेरिटस प्रोफेसर, कुरुक्षेत्र विश्वद्यालय, कुरुक्षेत्र

आकाश के विस्तार जैसा अनंत है उनका व्यक्तित्व

प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय

लेखक प्रोफेसर निगम के शिष्य हैं। वे दिल्ली विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के व्याख्याता तथा उपाचार्य, रीवा विश्वविद्यालय में आचार्य तथा विभागाध्यक्ष एवं कानपुर विश्वविद्यालय में कुलपति रह चुके हैं। सम्प्रति उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष हैं।

विन्ध्य की पावन धरती ने राष्ट्र को अनेक रत्न दिये हैं। इसी अंचल के एक कोने में सोन के किनारे बसे सामान्य से गाँव की एक धर्मपरायणा गृहिणी की कोख से जन्मे हीरालाल। शिक्षा और विज्ञान के क्षेत्र में इस लाल की चमक अंचल, प्रदेश और राष्ट्र की सीमाओं को लांघ गई। जब-जब उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस, फ्रांस, चीन एवं चेकोस्लोवाकिया में अपने व्याख्यान दिये, विन्ध्य की माटी की सुगन्ध वहाँ फैल गयी और ऊँचा हो गया मस्तक गिरिकुल पितामह विन्ध्याचल का। बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो0 हीरालाल निगम के जीवनवृत्त का समग्र निरूपण कोई एक लेखनी कर सके यह संभव नहीं है। अतः इस लेख की कमियों के लिए मैं प्रबुद्ध पाठकों से क्षमा याचना करते हुये प्रो0 निगम के प्रियतम शिष्य होने का गौरव लिए आगे बढ़ता हूँ।

अपने शिष्यों के प्रति गुरु, पिता एवं मार्गदर्शक का दायित्व निभाने वाले प्रो0 निगम का प्रमुख कार्य-क्षेत्र इलाहाबाद विश्वविद्यालय रहा जहाँ उन्होंने छात्र, शिष्य, शिक्षक एवं गुरु सभी भूमिकाएँ निभायी। वर्ष 1942 में वे बी0एस-सी0 कक्षा के छात्र के रूप में इस विश्वविद्यालय में आये। यहीं उन्होंने एम0एस-सी0 (1946, अकार्बनिक रसायन) में वरीयता क्रम में प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा आचार्य नीलरत्न धर के निर्देशन में डी0फिल0(1949) की उपाधि प्राप्त की। उनकी प्रतिभा का समुचित आदर करते हुए विश्वविद्यालय ने उन्हें वर्ष 1947 में ही रसायन विज्ञान विभाग में व्याख्याता पद पर बिठाया। तब से वे निरन्तर छात्रों एवं शिष्यों को ज्ञानालोक से आलोकित करते रहे। जिस किसी को एक भी दिन प्रो0 निगम का व्याख्यान सुनने का अवसर मिला वह उन पर मोहित हो गया। कक्षा मे श्यामपट पर हीरालाल की चाक से मोती के दाने निकलते थे। करीने से सजी उनकी लिखावट में उनके सजीले व्यक्तित्व की छाप होती थी। छात्र ही नहीं, उनके समकालीन शिक्षक भी उन्हें रसायन विज्ञान विषय के नवीनतम ज्ञान का कोष मानते थे। उन्होंने सदैव ही पुस्तकों को अपनी संपदा, नवीनतम ज्ञान को अपनी निधि एवं शिष्यों को अपना उत्तराधिकारी माना।

सतना जिले के देवराजनगर गाँव में जन्मे हीरालाल जी का बचपन रीवा में बीता और यहीं हुई उनकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा। आपके पिता स्वर्गीय श्री बद्रीप्रसाद जी निगम रीवा राज्य में सरकारी मुलाजिम थे, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विन्ध्य सरकार की सेवा में कृषि फार्म के संचालक पद से सेवानिवृत्त हुए। वे एक कर्मठ व विश्वसनीय राज्य कर्मचारी थे जो सेवा निवृत्ति के पश्चात् सन् 1980 में स्वर्गवासी हुये। बद्री प्रसाद जी के दो पुत्रों में आप छोटे थे और परिवार में

'छोटे' नाम से ही जाने जाते हैं। आपके बड़े भाई का नाम श्री सुन्दर लालजी निगम था जो राज्य सरकार की सेवा से सेवा निवृत्त होकर अधिवक्ता बने तथा वर्ष 1987 में उनका स्वर्गवास हुआ। आपकी माँ श्रीमती जानकी एक धर्मपरायण महिला थीं जिनका स्वर्गवास 1970 में हुआ।

आपका विवाह सन् 1950 में इलाहाबाद के तत्कालीन महा डाकपाल की पुत्री स्नेहलता जी से हुआ जो स्वयं एक विदुषी महिला हैं तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के गणित विभाग में रीडर पद से वर्ष 1989 में सेवानिवृत्त हुई हैं। आप छात्रों के बीच कड़े अनुशासन वाली शिक्षिका के रूप में ख्यात रहीं पर कक्षा के बाहर छात्रों को आपने अपने नाम के अनुरूप ही स्नेह प्रदान किया। प्रो0 हीरालाल जी निगम की तीन मेधावी संताने हैं। पुत्रियाँ इला व शिखा तथा पुत्र आलोक। इला ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय रसायन विज्ञान में प्रथम श्रेणी में एम0एस-सी0 एवं डी0फिल0 की है और सम्प्रति भारत सरकार के उच्च अधिकारी आयकर आयुक्त श्री आशुतोष प्रसाद से ब्याही हैं। उनके दो पुत्र (अटल एवं अविचल) हैं। दूसरी पुत्री शिखा इलाहाबाद विश्वविद्यालय की भौतिक शास्त्र की एम0एस-सी हैं तथा भारतीय स्टेट बैंक में उच्च अधिकारी हैं। उनके पति श्री विशाल भी भारतीय स्टेट बैंक में ही उच्च अधिकारी हैं। आपकी दो पुत्रियाँ(विजेता एवं पर्णिका) हैं। प्रो0 निगम के पुत्र श्री आलोक निगम ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सांख्यिकी में एम0एस-सी उपाधि पायी है तथा भारत के इस आक्सफोर्ड की अब तक की एम0एस-सी0 परीक्षा में सर्वाधिक अंक पाने का गौरव उन्हें प्राप्त है। वे वर्ष 1987 की आई0ए0एस0 परीक्षा में चयनित हुए तथा सम्प्रति हरियाणा कैडर के वरिष्ठ आई0ए0एस0 अधिकारी हैं। उनका विवाह स्व0 आर0के0 श्रीवास्तव की पुत्री रेनू से हुआ है। रेनू-आलोक के एक पुत्री श्रेयसी एवं एक पुत्र सूर्यांश हैं।

डा0 हीरालाल निगम की पहली विदेश यात्रा वर्ष 1956 में रसायन विज्ञान में उच्च शिक्षा हेतु इंग्लैण्ड के लिये हुई। वहाँ आपने लन्दन विश्वविद्यालय के युनिवर्सिटी कालेज में प्रो0 सर रोनैल्ड नाइहोम के निर्देशन में पी0एच0डी0 उपाधि प्राप्त की। विदेश गमन हेतु समुद्री जहाज पर चढ़ने से लेकर वापस भारत की धरती में पाँव रखने के बीच के दो वर्ष का एक-एक दिन उन्होंने अपने ज्ञान कोष की वृद्धि में लगाया। यह जीवन उन्होंने एक तपस्वी की भाँति जिया और अपनी झोली में समेटा ज्ञान का एक-एक कण जो उनके लिये और उनके अनुयायियों के लिये आज भी एक निधि है। अब तक वे लगभग 15 बार विदेश यात्रा पर जा चुके हैं जिनमें अधिकतर यात्राएँ कोआर्डिनेशन कैमिस्ट्री के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों से सम्बन्धित रहीं। एक बार रॉयल सोसायटी के निमन्त्रण पर गये हैं व एक बार विश्व की केमिकल सोसाइटीज के अध्यक्षों के सम्मेलन में। कॉमनवेल्थ राष्ट्रों के कुलपतियों के सम्मेलन हेतु भी वे एक बार इग्लैण्ड आमंत्रित किये जा चुके हैं जहाँ बी0बी0सी0 को दिया गया उनका साक्षात्कार बहुचर्चित रहा है।

पी-एच0डी0 हेतु लंदन विश्वविद्यालय में कार्य करते हुए प्रो0 निगम ने उस समय के (आज भी) अत्यंत महत्वपूर्ण विषय 'मेटल कार्बोनिल' पर शोध किया। मोलिब्डेनम तथा टंगस्टेन के कुछ ऐसे कार्बोनिल संश्लेषित किए जो उनके पूर्वकर्मी न कर सके थे। इस सफलता से उनके निर्देशक प्रो0 नाइहोम इतने प्रभावित हुए कि उन्हें अपने साथ कोआर्डिनेशन केमिस्ट्री के हर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में ले जाने लगे। यह काल अकार्बनिक रसायन में क्रांति का काल था। लीगैण्ड फील्ड सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ ही था। अकार्बनिक यौगिकों के डी0-डी0 स्पेक्ट्रा तथा अनुचुम्बकीय गुणों की व्याख्या होनी प्रारम्भ ही हुई थी। स्वदेश लौटकर डा0 निगम ने उस समय का यह नवीनतम ज्ञान छात्रों को देना प्रारम्भ किया। डा0 हीरालाल निगम के ही मार्गदर्शन में प्रयाग विश्वविद्यालय में इस विषय पर अध्यापन एवं शोध सर्वप्रथम प्रारम्भ हुआ।

वर्ष 1978 में प्रो0 हीरालाल निगम इंडियन केमिकल सोसाइटी के रिसर्च जर्नल के मानद सम्पादक

हुए और दो वर्ष तक इस पद को सुशोभित किया। भारत जैसे विशाल राष्ट्र में रसायन वैज्ञानिकों की संख्या भी विशाल है। इस विशाल परिवार का प्रधान होना सहज नहीं है। किन्तु प्रो० निगम ने हर फेलो रसायन वैज्ञानिक की समस्या सुनी और सुलझाई। वे सन् 1979 में इंडियन साइंस कांग्रेस के रसायन विज्ञान प्रभाग के अध्यक्ष चुने गये। इस पद से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अधिवेशन में उन्होंने 'एक्स-रे कोर स्पेक्ट्रममिति' पर जो व्याख्यान दिया वह अनेक युवा वैज्ञानिकों के लिए प्रेरणास्रोत बना। आज भी इस विषय के शोध में हम विश्व की अग्रिम पंक्ति में हैं।

अकार्बनिक संकुलों की अनुचुम्बकीयता तथा स्पेक्ट्रमी गुण डा० निगम का प्रियतम विषय रहा और इसका संदेश वे देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में व्याख्यान देकर पहुँचाते रहे। कालांतर में प्रो० निगम की रुचि एक्स-रे अवशोषण कोर स्पेक्ट्रममिति (ज्रुच) में बढ़ी। इस विषय पर उन्होंने अनेक शोधप्रबंध निर्देशित किये। उनका लिखा रिव्यू लेख 'कोआर्डिनेशन केमेस्ट्री रिव्यूज' में छपा जो इस विषय पर आज भी एक मानक लेख माना जाता है।

डा० हीरालाल निगम प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त भी नहीं हो पाये थे कि उन्हें अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा का कुलपति पद सँभालने का निमंत्रण मिला। इस वि०वि० की स्थापना का सपना स्वर्गीय कप्तान अवधेश प्रताप सिंह जी का ही था जो उनके पुत्र श्री गोविन्द नारायण सिंह जी के मुख्यमंत्रित्व काल में साकार हुआ। प्रो० निगम बताते हैं कि विन्ध्य प्रदेश का प्रधानमंत्री बनते ही कप्तान साहब ने इस विश्वविद्यालय की स्थापना का संकल्प लिया था और उन्हीं दिनों अपने इलाहाबाद प्रवास के समय मुझे (प्रो० निगम को) बुलाकर अपनी कल्पना के विश्वविद्यालय का कुलपति पद सम्हालने को कहा था। कप्तान साहब नहीं रहे पर उनके दोनों स्वप्न साकार हुए- विश्वविद्यालय भी बना और प्रो० निगम कुलपति भी बनें।

वर्ष 1976 में प्रो० निगम राष्ट्र की सर्वोच्च वैज्ञानिक संस्था 'इंडियन नेशनल साइंस एकेडेमी के 'फेलो' चुने गये और चार वर्षों तक एकेडेमी की कार्यकारिणी के सदस्य रहे। इस एकेडेमी की फेलो-चयन समिति के सदस्य के रूप में भी आपने कार्य किया। आपके कार्यकाल में अनेक प्रतिभावान रसायन-वैज्ञानिकों को एकेडेमी का फेलो चयनित किया गया।

नेशनल एकेडेमी आफ साइंसेज इंडिया के वे दीर्घ काल से फेलो हैं। कार्यकारणी के सदस्य, विदेश सचिव तथा फिजिकल साइंसेज के अध्यक्ष के रूप में एकेडेमी की सेवा कर चुके हैं। आपको 'नेशनल एकेडेमी साइंस लेटर' शोध पत्रिका के संस्थापक सम्पादक होने का गौरव प्राप्त है। हिन्दी में 'विज्ञान' का प्रचार प्रसार करने वाली प्राचीनतम संस्था विज्ञान परिषद के आप प्रधानमंत्री रहे हैं तथा परिषद की मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के सम्पादक का दायित्व निर्वहन कर चुके हैं। हिन्दी में विज्ञान लेखन हेतु विज्ञान परिषद से सन् 1983 में आपको अतिविशिष्ट सम्मान मिल चुका है।

प्रो० निगम को देखकर कौन कह सकता है कि वे जीवन के 81वें वर्ष में प्रविष्ट हो रहे हैं। उनकी दृष्टि आज भी देश के शिक्षा स्तर में सुधार के नये-नये आयाम खोजती है। अनेक वर्षों से आप लखनऊ विश्वविद्यालय की कार्य परिषद में कुलाधिपति के प्रतिनिधि हैं। छात्रों, शिक्षकों तथा वैज्ञानिकों की कई पीढ़ियाँ आज भी उनसे मार्गदर्शन पाती हैं। उनके सान्निध्य में बैठकर हम सभी को वटवृक्ष की सी शीतलता प्राप्त होती है। हमारे लिए उनका व्यक्तित्व आकाश के विस्तार जैसा अनंत है।

अनेक सम्मेलनों में मुझे प्रो० निगम से मिलने के अवसर प्राप्त हुए हैं। अनेक प्रशासनिक तथा मानव स्वभाव के कारण उत्पन्न जटिल मामलों में भी उनकी स्पष्ट राय ने मुझे अत्यन्त प्रभावित किया है। उनकी प्रशासनिक उपलब्धियों का मैं सम्मान करता हूँ और उनके सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन की कामना करता हूँ।

वाई.के गुप्ता, पूर्व विभागाध्यक्ष, रसायन विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

मुझे गर्व है अपने पिता पर

श्रीमती शिखा ओहरी

लेखिका प्रोफेसर निगम की कनिष्ठ पुत्री हैं। सम्प्रति भारतीय स्टेट बैंक में अधिकारी हैं।

डैडी, यह शब्द मेरे समक्ष ऐसे व्यक्तित्व का चित्र प्रस्तुत करता है, जिसमें सहयोग, उत्साहवर्द्धन तथा पथ प्रदर्शन की सतत् भावना मूर्तिमान होती रहती है। मुझे बचपन का कोई ऐसा क्षण याद नहीं है जब डैडी ने मुझे थप्पड़ लगाया हो। डैडी चाहते थे कि मैं शिक्षा के क्षेत्र में जाऊँ लेकिन जब मैने वित्तीय/बैंकिग के क्षेत्र में अपने कैरियर को प्रारम्भ किया तो उन्होने कभी भी किसी प्रकार की आपत्ति नहीं प्रकट की अपितु इस क्षेत्र में ही आगे बढ़ने के लिए मुझे शुभकामनाएं देते रहे। उनकी ज्ञान पिपासा तथा जीवन के प्रति उत्साही दृष्टि का एक अलग ही स्वरूप है। इस उम्र में भी वे किसी से भी किसी भी विषय पर घंटो बातचीत कर सकते हैं।

जब मैंने अपनी द्वितीय पुत्री को लखनऊ में जन्म दिया उस समय मेरी बड़ी लड़की रुड़की में परीक्षा में सम्मिलित हो रही थी। ऐसी स्थिति में डैडी ने ही उसके पढ़ने, खेलने, स्कूल जाने आदि का पूरा ध्यान रखा। मुझे याद है जब मेरे छोटे भाई आलोक आई0आई0टी से इन्जीनियरिंग की पढ़ाई एक सप्ताह में ही छोड़कर घर वापस आ गए थे, क्योंकि उन्हे अध्ययन की इस विधा में स्वाभाविक रुचि प्रतीत नहीं हुई। डैडी ने उन्हें ध्यान से सुना और नाराज होने के बजाय उनका उत्साह बढ़ाया। आगे चलकर आलोक भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयनित होने में सफल रहे। अपने अतिव्यस्त दैनन्दिन जीवन में से वे हम लोगों के लिए कुछ समय अवश्य ही निकाल लेते थे। मैंने डैडी को कभी गुस्सा होते या चिन्ता में पड़े नहीं देखा। आपात परिस्थितियाँ भी उन्हे कभी विचलित नहीं कर पातीं।

ईमानदारी और प्रतिबद्धता के गुणों को हम लोग डैडी से ही पा सके। ज्ञान-विज्ञान के प्रति हम लोगों में जो अनुराग पैदा हुआ वह भी डैडी के कारण ही। वे सदैव वैज्ञानिक सोच के विकास के लिए उत्साहित किया करते हैं। उन्होंने हमें सिखाया कि लोगों का मूल्यांकन उनकी पद प्रतिष्ठा तथा धन के आधार पर न कर आन्तरिक सत्व या चरित्र के आधार पर करना चाहिए। वे हमेशा प्रसन्न रहने तथा सहृदय रहने की बात करते हैं। वे कहा करते हैं "यदि तुम कुछ नहीं दे सकते तो कम से कम मुस्कान तो दे ही सकते हो।" डैडी में अद्भुत आन्तरिक शक्ति है। अन्याय का प्रतिकार करना तथा अपने अधिकारों के लिए लड़ना हम लोगो ने उनसे ही सीखा है। उनके आदर्श महात्मा गाँधी हैं। अभावग्रस्त, सुविधाहीन तथा कमजोर लोगों की सहायता में विनम्रतापूर्वक तत्पर रहने तथा न्यायपरक रहने की वे शिक्षा देते हैं।

सबसे बड़ी शिक्षा जो उन्होंने दी वह है "जीवन का उद्देश्य है, उद्देश्य-पूर्ण जीवन।" ऐसे पिता पर मुझे गर्व है।

प्रो0 हीरालाल निगम जी की 80वीं वर्षगाँठ पर मैं उनके स्वस्थ एवं समृद्ध जीवन की कामना करता हूँ।

— वी. कृष्णन, जवाहरलाल नेहरू सेन्टर फार एडवांस साइन्टिफिक रिसर्च बैंगलोर

मेरे कर्मयोगी पिता

आलोक निगम

लेखक प्रोफेसर निगम के पुत्र हैं तथा हरियाणा कैडर के वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी हैं।

भगवान की असीम कृपा, गुरुजनों तथा माता–पिता के मौलिक मार्गदर्शन और अनुकरणीय जीवन मूल्यों से सराबोर कर्म–संस्कार के प्रेरणादायी आदर्श चरित्रों से मुझे सदैव जीवन की ऊंचाईयों को छूने के लिए आत्म–शक्ति, लगन, समर्पण तथा नम्रता जैसे विशिष्ट गुण मिले हैं।

मेरे जीवन के प्रभात का अर्थ 'कर्म ही पूजा है'। कर्म के निरन्तर सान्निध्य में 'मात्र कर्म' की सच्ची प्रेरणा मां की पवित्र गोद में लोरियों के संगीतमय सीमांतों से कब शुरू हुई और कब पिता के आदर्शों को मैंने अंगीकार किया, यह सब स्मृतियों की श्रृंखला में पिरोना सहज नहीं है। फिर भी प्रकृति ने मुझे खुले मन से जीवन की सच्ची बुनियाद को समझने और कुछ कर दिखाने की इच्छा शक्ति तो दी, परन्तु दृढ़ता और आत्म बल पिता की ही देन है। आज मैं जिन्दगी की जिस मंजिल पर पहुंचा हूं उसके पीछे पिता का आशीर्वाद और संकल्प तो है ही, माता का लाड़–दुलार भी कुछ कम नहीं है।

'कर्म में कुशलता ही योग है' ऐसा भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है। कर्म पथ पर अग्रसर किसी भी व्यक्ति के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे विरासत में पिता के आदर्शों और सिद्धान्तों के गुण मिले जिससे मुझे कभी बौद्धिक, मानसिक, दैहिक, भौतिक अथवा दैविक सन्तापों की पीड़ा नहीं हुई। मैं पिता की सादगी एवं सरलता से भी प्रभावित रहा हूं। सच्चाई के पथ पर चल कर उन्होंने लगभग सारे विश्व में रसायनज्ञों का मार्गदर्शन किया है।

जीवन का कड़वा सच यह है कि क्रोध में भी उसे जाहिर करने का अन्दाज अनूठा है। वे अपनी नाराजगी थोड़े शब्दों में मीठे लहजे में कहने में माहिर हैं। उनकी नसीहत बार–बार याद है कि हमें ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए जिसका हमारे पास कोई जवाब नहीं हो। उनका यह कथन कितना प्रेरणादायक है कि यदि इस समाज में एक–एक व्यक्ति को मौलिक विकास से जोड़ दें तो वे श्रेष्ठजन चलती फिरती संस्थायें बन जायेंगे और इससे समाज का नव–निर्माण संभव होगा।

यूं तो बचपन की असंख्य स्मृतियां हैं जो पिता जी के अंग–संग जीवन के बहुत करीब होते हुए बराबर मन–आत्मा को मानसिक खुराक देकर गुदगुदाती हैं। उन्हें कागज पर उतारना सहज नहीं है। उनके व्यक्तित्व के आदर्श को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिलना तथा ऊंचे पदों पर आसीन होकर पद और व्यक्ति विशेष के भेद से परे सम्मानजनक नागरिक का दर्जा हासिल होना सचमुच गौरव की बात है।

हम सभी के जीवन–पथ पर 'कर्म ही पूजा' के उनके मंगलदीप सदैव आलोकित होते रहें।

मेरे जीवन-साथी डा0 निगम

डॉ0 (श्रीमती) स्नेहलता निगम

कुछ पता ही न चला कि हमारे दाम्पत्य जीवन के यह 52 वर्ष किस प्रकार बीत गये। 16 जनवरी सन 2000 को हमने अपने परिणय सूत्र में बँधने की स्वर्ण जयन्ती मनाई थी। हमारा संसार हमारे परिजनों, पुरजनों के हंगामा भरे स्वरों से गूँज उठा था। पचास वर्ष पहले की बारात की चर्चा के साथ संस्मरणों की बारात मस्तिष्क में घूमती रही।

जब मेरी शादी हुई, मैं लखनऊ विश्वविद्यालय से गणित शास्त्र में एम0एस-सी0 (1949) पास कर चुकी थी और डा0 निगम इलाहाबाद युनिवर्सिटी से डी0फिल0 (1949) की उपाधि लेकर रसायन विज्ञान में प्रवक्ता के पद पर थे। मेरी प्रबल इच्छा थी कि मैं भी गणित में शोध कार्य करूँ। उन्होने मेरी इस माँग का स्वागत किया और उसी वर्ष मुझे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के गणित विभाग में शोध विद्यार्थी के रूप में भर्ती करा दिया। विख्यात गणितज्ञ प्रो0 प्यारे लाल श्रीवास्तव के मार्गदर्शन में मुझे विश्वविद्यालय में गणित शास्त्र की प्रथम महिला डी0फिल0 (1953) होने का गौरवशाली सौभाग्य प्राप्त हुआ। जीवन चलता रहा, दो छोटी पुत्रियों की जिम्मेवारी का भार व इनके इंग्लैण्ड चले जाने के कारण शोध कार्य ढीला पड़ गया। इनके इंग्लेण्ड प्रवास पर मैं अपने ससुराल रीवा में रहने चली गई, वहाँ मुझे अपने सास-श्वसुर का समुचित प्यार व सहारा मिला। ये प्रति सप्ताह मुझे कम से कम दो पत्र भेजते थे। उन दिनों अन्तर्राष्ट्रीय दूरभाष की अच्छी सुविधा उपलब्ध नहीं थी। इनके समुद्रान्त प्रवास के दौरान बच्चों की अस्वस्थता के कारण काफी परेशानी रही। मैं रीवा व लखनऊ के बीच समय बिताती रही। राहत तभी मिली जब दो वर्ष बाद ये लन्दन विश्वविद्यालय से पी0एचडी0 उपाधि लेकर भारत लौटे।

यद्यपि हम दोनों के स्वभाव में काफी भिन्नता है। खानपान, रहन–सहन, लेन–देन, दान–दक्षिणा, व्रत–त्योहार, लाभ–हानि, टोना–टोटका, खेल–आखेट, साहस–दुस्साहस, सभी के बारे में हमारा अपना–अपना मत रहा है किंतु इस मतांतर के कारण कभी रिश्ते में खिन्नता नहीं आई। हम दोनों की परम शक्ति में अटूट आस्था है और एक दूसरे में पूर्ण विश्वास है।

गार्हस्थिक कार्यों में मुझे कोई विशेष रुचि नहीं थी। मैं नौकरी करना चाहती थी। डा0 निगम ने मुझे यह आजादी दी। मुझे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवक्ता पद मिल गया। किन्तु ज्यादा समय मैं इनसे दूर नहीं रह पाई और इलाहाबाद लौटकर मैने गणित शास्त्र में प्रवक्ता पद पर सी0एम0पी0 डिग्री कालेज में नौकरी आरम्भ कर दिया। इस प्रकार मेरे दोनों 'लोक' सध गये!

मेरे पिताजी तथा माँ का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। मेरे कोई सगा भाई नहीं था। पिताजी के गिरते स्वास्थ्य के कारण मैं अत्यधिक चिन्तित रहती थी किन्तु डा0 निगम ने मेरे पिता जी के स्वास्थ्य को सर्वाधिक महत्व दिया। उनकी देख-रेख उनकी परिचर्या में कोई कमी नहीं आने दी। मेरा सगा भाई भी होता, तो इतना नहीं कर पाता। डा0 निगम ने उनका इलाज बम्बई के टाटा अस्पताल में कराया। यद्यपि उन दिनों (1961 में) वे डायमण्ड जुबली छात्रावास की जिम्मेवारी

में अत्यधिक व्यस्त थे। उसी वर्ष पुत्र आलोक का जन्म हुआ। तीन बच्चों की जिम्मेवारी, (यद्यपि बड़ी पुत्री इला व छोटी पुत्री शिखा धीरे-धीरे शैशव पार कर रही थीं) और नौकरी का कार्यभार अधिक होने से मैंने नौकरी छोड़कर यू0जी0सी0 की सीनियर फेलोशिप ले ली। शोध कार्य जारी रखा। अन्ततः सितम्बर सन 1964 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मुझे गणित विभाग में प्रवक्ता पद मिल गया। सन 1989 में मैने विश्वविद्यालय सेवा से अवकाश ग्रहण किया।

डा0 निगम के अत्यन्त उदार, स्नेहिल, सरल व निश्छल स्वाभाव के कारण उनके परिवार के लोग व उनके मित्र तो उन्हें मानते ही थे, मेरे रिश्तेदार भी उन्हें मुझसे ज्यादा मानते थे। बच्चों के पालन पोषण में इन्होंने बराबर का साथ दिया। बच्चों के अधिक बीमार पड़ने पर मैं तो घबड़ाहट के कारण कुछ कर ही नहीं पाती थी, दवा दारू, देख-रेख सब ये ही करते थे। अपनी नौकरी तथा शोध कार्य के प्रसंग से डा0 निगम कुछ समय के लिए (1976-77) इन्दौर विश्वविद्यालय के रसायन विज्ञान विभाग के अध्यक्ष पद पर रहे। न्यू साउथ वेल्स विश्वविद्यालय, सिडनी आस्ट्रेलिया में (1970) 'लिवर ह्यूम विजटिंग फेलो' के रूप में रहे, रीवा विश्वविद्यालय में कुलपति (1982-88) के पद पर रहे। गार्हस्थिक आवश्यकताओं के कारण मैं उनके साथ न जा सकी, निगम साहब ने मेरे न जाने में बुरा नही माना, अकेलेपन में ही अपना प्रवास बिताया। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने के लिए डा0 निगम पन्द्रह बार विदेश गये। सन 1991 में 'रायल सोसाइटी आफ कैमेस्ट्री' की 150वीं वर्षगांठ पर 'इण्डियन केमिकल सोसाइटी' के अध्यक्ष की हैसियत से लन्दन सम्मेलन में भाग लेने जब वे लंदन गये तब मैं भी उनके साथ गयी। विज्ञान व शिक्षा के क्षेत्र में उनकी उपलब्धियों के लिए उन्हें राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान जब भी मिले, मेरे लिए व बच्चों के लिए, वे घटनाएं गौरवशाली रही हैं।

मैंने उनको जीवन के लिए अदम्य उत्साह और न्याय हेतु संघर्ष के लिए कटिबद्ध देखा है। गरीबों के लिए डा0 निगम तो स्वामी विवेकानन्द के दरिद्र-नारायण वाले दर्शन में विश्वास रखते हैं, राष्ट्रीयता में गाँधीवादी हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा की भूमिका में इनका हिन्दी प्रेम सराहनीय है, विज्ञान परिषद प्रयाग से जुड़ना इसी की एक कड़ी है। शिक्षक के रूप में इनकी लोकप्रियता बहुचर्चित रही है। संभवतः इनकी रचनात्मक विचारधारा की सबसे अधिक छाप इनके शोध विद्यार्थियों पर पड़ी है। इनके सभी शोध छात्रों से सदैव समुचित आदर मिला है। डा0 अमरनाथ कुमार, डा0 पी0सी0 जैन, डा0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय डा0 सतीश कुमार, डा0 हरस्वरूप शर्मा, डा0 विजय कृष्ण, डा0 जगदीश प्रसाद विशेष रूप से निकट रहे। डा0 वी0के0 माथुर तो मेरे पिता जी की अस्वस्थता में बम्बई में उनके साथ रहे। इन्हीं शिष्यों से स्नेह और सम्मान पाकर आज हम डा0 निगम के जीवन की 80वीं वर्षगाँठ के शुभ अवसर पर परम पिता परमेश्वर से इनके शतायु होने की प्रार्थना करते हैं।

प्रो0 निगम का वैज्ञानिक के रूप में व्यक्तित्व जितना सुदृढ़ है उससे भी अधिक मोहक उनके व्यक्तित्व का मानवीय पक्ष है। उन्होंने मानवता का सदैव सम्मान किया है। अपने से कनिष्ठ वैज्ञानिकों को उन्होंने सदैव स्नेह दिया है। मैं उनके सान्निध्य में सदैव अग्रज का भाव पाता हूँ। उनके हृदय की विशालता का वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वे शतायु हों और इसी प्रकार हमारा मार्गदर्शन करते रहें।

— प्रो0 उमेश चन्द्र अग्रवाल, पूर्व विभागाध्यक्ष,
रसायन विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर

गहि सद्गुरु की साखि

प्रो0 हीरालाल निगम

विज्ञान परिषद प्रयाग मेरे सम्मान में **विज्ञान** का विशेषांक निकालने जा रहा है, यह सेदंश ही मेरे लिए रोमांचकारी है। ऐसे में जीवन के अस्सी वर्षों में मुझसे क्या कुछ बन सका, यह लिख पाना मेरे लिए अति दुश्कर कार्य है। और फिर मुझसे कुछ बन पड़ा भी या नहीं, समाज को, राष्ट्र को और देश का भावी पीढ़ी को मैं कुछ दे सका भी या नहीं, मैं कैसे कहूँ। पर हाँ, यदि मुझसे कुछ भी बन पड़ा है तो यह मेरे गुरुजनों की कृपा है। इसलिए मैं संत कबीर के शब्दों को ही दुहरा सकता हूँ-

कबीर मारग कठिन है, मुनिवर बैठे थाकि।
तहाँ कबीरा चलि गया, गहि सद्गुरु की साखि।।

पुण्य सलिला सुवर्णरेखा की एक सहायक नदी नागभद्र के किनारे स्थित देवराज नगर (रीवा राज्य, मध्यप्रदेश) ग्राममें मध्यवर्ग के एक कुलीन हिन्दू परिवार में मेरा जन्म हुआ। गाँव का सारा वांड़्मय, उसके लहलहाते खेत, उसकी नैसर्गिक रमणीयता, सरस स्वाभाव के पुरजन मेरे स्मृति-पटल पर अंकित हैं, शैशव और बाल्य काल वहीं बीता। मेरे पिता श्री बद्री प्रसाद निगम (स्व0) एक अत्यन्त कर्तव्यपराध्ण वैष्णव थे। मेरी माँ, श्रीमती जानकी देवी निगम (स्व0) एक अत्यन्त धर्मपरायण महिला थीं। गाँव के हिन्दी मिडिल स्कूल से चौथा दर्जा उत्तीर्ण कर मैं रीवा आया, वहाँ मैं ननिहाल में रहा। अंग्रेजी स्कूल में मुझे नियमानुसार तीसरे दर्जे में प्रवेश मिला, क्योंकि अपने गाँव के स्कूल में मैने अंग्रेजी नहीं पढ़ा था। मैने रीवा में दरबार कालेज से हाई स्कूल तथा इन्टरमीडिएट परीक्षाएं (परीक्षा बोर्ड, अजमेर, राजपूताना) पास कर जुलाई, 1942 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में स्नातक कक्षा (बी0एस-सी0 भाग-1) में प्रवेश लिया। यहीं से मैने बी0एस-सी0(1944) तथा एम0एस-सी0(1946) परीक्षायें उत्तीर्ण की।

मेरे विश्वविद्यालय में प्रवेश के समय एक ओर द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका से मानवता आक्रान्त थी और दूसरी ओर राष्ट्रपति महात्मा गाँधी ने 'भारत छोड़ो' आंदोलन की रणभेरी बजा दी थी। इस आन्दोलन में हम छात्र भी कूद पड़े थे। अन्ततः 15 अगस्त सन् 1947 को देश स्वतंत्र हो गया। मैने रसायन विभाग के अध्यक्ष, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डा0 नील रत्न धर के मार्गदर्शन में शोध कार्य आरम्भ कर दिया था। 8 बजे सुबह प्रयोगशाला में पहुँचना और 6 बजे शाम तक काम करते रहना, यही दिनचर्या थी। डा0 धर स्वयं पूरे समय बैठे रहते थे, अपने बंगले से पैदल आते थे, वापस पैदल जाते थे, हाथ में छाता जरूर रखते थे, बैठकों में या निमंत्रण पर कहीं व्याख्यान देने, यहाँ तक कि रेलवे स्टेशन भी पैदल जाते थे। कोई संकोच नहीं होता था। वे अपद्रव्यों के रसायन (कैमिस्ट्री आफ वेस्ट मैटीरियल) को बहुत महत्व देते थे। उनकी प्रयोगशाला में हम लोग 10-12 शोध छात्र थे, मेरे ऊपर उनकी विशेष कृपा थी। **मृदा में नाइट्रोजन क्षति का तापीय तथा गतिकी का अध्ययन** शीर्षक वाला मेरा शोध-ग्रन्थ विश्वविद्यालय की डी0फिल0 उपाधि के लिए स्वीकृत हो गया (1949)। तो डा0 धर के स्नेह व आशीर्वाद से 9 अगस्त सन् 1947 को ही मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हो गया था। सन् 1951 में ही मैं 'नेशनल एकेडेमी आफ साइंसेज, इलाहाबाद, इण्डिया' का फेलो निर्वाचित हो गया था। डा0 धर इस एकेडेमी के संस्थापक फेला थे। सन् 1930 में संस्थापित देश की सबसे पुरानी नेशनल एकेडेमी का वर्तमान में मुझे अत्यन्त वरिष्ठ फेलो होने का सौभाग्य प्राप्त है। मात्र डा0 देवेन्दे शर्मा मुझसे वरिष्ठ हैं। गुरुवर डा0 धर को मेरा शत-शत नमन!

मेरा विवाह 16 जनवरी, सन् 1950 को लखनऊ के एक कायस्थ परिवार की कन्या, स्नेहलता श्रीवास्तव से हो गया मेरी पत्नी लखनऊ विश्वविद्यालय से एम0एस-सी0 (1949) गणित शास्त्र में पास कर चुकी थीं।

पारिवारिक जीवन के साथ-साथ उन्होने भी गणित में शोधकार्य आरम्भ कर दिया। सन् 1953 में उन्हें गणित शास्त्र में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की प्रथम डी0फिल0 महिला होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जीवन चलता रहा, कई वर्ष निकल गये।

मेरी प्रबल इच्छा थी कि मैं और अधिक उच्च स्तर का शेध कार्य करने इंग्लैण्ड जाऊँ। सर्वप्रथम कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में विश्व प्रसिद्ध वयोवृद्ध प्रो0 एच0जे0 एमीलायस ने मुझे अपनी प्रयोगशाला में स्थान देने की स्वीकृति दी किन्तु यह स्थान छः माह बाद रिक्त होना था। उन्हीं दिनों डा0 रामचरण मेहरोत्रा, जो मेरे अध्यापक थे और अब वरिष्ठ सहयोगी, लन्दन से पी0एच-डी0 करके लौटे। उनकी सलाह पर मैने एक युवा रसायनज्ञ डा0 आर0एस0 नाइहोम की प्रयोगशाला में स्थान पाने को आवेदन दिया। डा0 नाइहोम सर विलयम रैमसे प्रयोगशाला में प्रोफेसर होने वाले थे। प्रो0 नाइहोम का शीघ्र उत्तर आया "यहाँ प्रोफेसर होने के बाद भारत से शोध कार्य के लिए आपका आवेदन पत्र सबसे पहला है, मैं सहर्ष आपको अपनी टीम में स्थान देता हूँ"। इस हेतु डा0 मेहरात्रा का एहसान मैं जीवन भर नहीं भूलूंगा।

प्रो0 नाइहोम ने मुझे "ड्यू पान्ट (क्न च्वदज) फेलाशिप" दी। धातु कार्बोनिल बनाने वाली विश्व की कैनाडा स्थित यह प्रमुख कम्पनी थी। मुझे प्रो0 नाइहोम ने धातु कार्बोनिलों की विस्थापन अभिक्रियाओं का अध्ययन करने को कहा। तीस वर्षो के अथक प्रयास से भी डा0 हीवर के नेतृत्व में अनेक शोध कर्ता टप् समूह के धातु कार्बोनिल के टेट्रा-विस्थापित यौगिक बनाने में असफल रहे थे। प्रो0 नाइहोम का अपना प्रयास भी सफल नहीं हो सका था। यह तथ्य π-बन्ध के सिद्धान्त की कसौटी बन चुका था, और यह श्रेय मेरे भाग्य में था।

1956 जून में मैने कार्य आरम्भ किया। लगभग 8-10 माह बाद एक दिन मैने अभिक्रिया हेतु जो उपकरण डिजाइन किया उसके अन्दर अत्यधिक दाब बढ़ गया और वह धमाके के साथ बिखर गया। छत, फर्श, यहाँ-वहाँ शीशे के टुकड़े और मेरा उपहास करते हुए अंग्रेज शोध छात्र। मैने मन ही मन काम छोड़कर घर लैट जाने का विचार बना लिया। इतने में ही खबर पाकर प्रो0 नाइहोम वहाँ आए। आश्चर्य, विस्फोट का हाल सुनकर वे तो प्रसन्न थे। पहले तो उन्होने मेरा मजाक उड़ाने वाले शोध छात्रों को डाटा फिर मेरी पीठ थपथपा कर बोले, "शाबास, विस्फोट हुआ यानी अभिक्रिया हो गई, इस अभिक्रिया के लिए तीस वर्ष से किये गए प्रयास असफल रहे थे" आगे सावधान रहने का आदेश देकर वे चले गए। उनका आशीष पाकर मेरा मन बढ़ा। अंततः वह अभिक्रिया पूरी तरह सफल हुई और थोड़े ही दिनों में मैने टप् समूह के धातु तत्वों, क्रोमियम, मालिब्डिनम तथा टंग्स्टन के टेट्रा-विस्थापित यौगिक उनके हाथों में रख दिए। कमाल तो उनके द्वारा बहु प्रयुक्त "लिगैण्ड" आर्थोफेनीलीन डाइमेथिल टरशियरी आर्सीन का था। उन यौगिकों को प्रो0 नाइहोम ने रसायन विभाग के अन्य प्रकाण्ड रसायनज्ञों जैसे- डा0 जे0 लुइस, डा0 डी0पी0 क्रेग, डा0 टी0एम0 डन, डा0 ब्रायन फीगिस को दिखाते जर्मनी के डा0 हीवर के पास भी उसका एक नमूना भेज दिया और एक शोध-पत्र तुरन्त "प्रोसीडिंग्स आफ केमिकल सोसाइटी" लन्दन में प्रकाशित करा दिया। प्रो0 नाइहोम सन 1957 में "फेलो आफ रॉयल सोसाइटी" निर्वाचित हुए और आगे चलकर उन्हें "नाइटहुड" से विभाषित किया गया। वे सर रोनाल्ड सिडनी नाइहोम के नाम से विख्यात हुए। "**टप् समूह के धातु कार्बोनिलों की विस्थापन अभिक्रियाएं**" शीर्षक वाला मेरा शोध-ग्रन्थ लन्दन विश्वविद्यालय की पी0एच-डी0 उपाधि के लिए स्वीकृत हो गया, इस प्रकार जून 1956 से आरम्भ कर जून 1958 में मैं पी0एच-डी0 की उपाधि लेकर जुलाई में भारत लौट आया। लन्दन विश्वविद्यालय में दो वर्ष में पी-एच0डी0 उपाधि मिलने के उदाहरण विरले हैं।

प्रो0 नाइहोम ने सबसे पहले अकार्बनिक रसायन के पुनर्जागरण अभियान की कल्पना की। उप सह-संयोजकता वाले यौगिकों के रसायन की भूमिका में उनका "संयोजकता शेल-इलेक्ट्रान युग्म सिद्धान्त" मील का पत्थर माना जाता है। उन्होने यह सिद्धान्त 1957 में प्रतिपादित किया था। डा0 जोसेफ चैट, डा0 जी0 विलकिन्सन डा0 नाइहोम तथा डा0 सिलेन ने मिलकर सन् 1955 में लन्दन में "इन्टरनेशनल कोआर्डिनेशन कैमिस्ट्री कान्फ्रेन्स" (आई0सी0सी0सी0) को जन्म दिया। इन चार संस्थापक वैज्ञानिकों के सम्मेलन में डा0 ऑरगेल ने लिगैण्ड फील्ड सिद्धान्त पर भाषण दिया। लिया यह अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी, सन् 1957 की रोम आई0सी0सी0सी0 में प्रो0 नाइहोम मुझे अपने साथ ले गये। वहाँ मैं अकेला और पहला

भारतीय प्रतिभागी था। सन् 1959 में यह सम्मेलन लन्दन में हुआ, जहाँ मैं भारत का पहला प्रतिनिधि था। इन सम्मेलनों में डा0 नाइहोम ने मेरा परिचय विश्व के अनेक प्रकाण्ड रसायनज्ञों से कराया। उससे मेरे शोध कार्य में बड़ी सहायता मिली। विशेष रूप से डा0 स्टैनली कर्शनर में मेरी मैत्री इसी परिचय के कारण हुई। कालान्तर में डा0 कर्शनर ही आई0सी0सी0सी0 के स्थायी सचिव बने और मुझे आई0सी0सी0सी0 की अन्तर्राष्ट्रीय समिति का सदस्य बना दिया और मुझे इन सम्मेलनों में जाने के अनेक अवसर मिले। नैन्जिंग सम्मेलन में सत्र वक्ता होने का सम्मान भी मिला।

प्रो0 नाइहोम ने भारत सरकार के निमंत्रण पर वैज्ञानिक शोध के उन्नयन हेतु परामर्श देने भारत आना स्वीकार कर लिया था। मेरे गुरु मेरे देश आ रहे हैं, मेरे घर आ रहे हैं, उनके आतिथ्य का, उनके सम्मान का अवसर मिल रहा है। मेरा हर्षातिरेक, मेरी उत्सुकता, मेरी उत्कट प्रतीक्षा एक कार दुर्घटना में उनकी मृत्यु के समाचार से दुख और निराशा के आँसुओं के सागर में बह गई। टोराँटो की अन्तर्राष्ट्रीय कोऑडिनेशन कैमिस्ट्री कान्फ्रेन्स में प्रो0 नाइहोम की स्मृति में एक विशेष सत्र "नाइहोम मेमोरियल सत्र" का आयोजन हुआ। उस सत्र की अध्यक्षता मुझको सौपी गई। उपस्थित वैज्ञानिकों ने उस महापुरुष को भाव-भीनी श्रद्धान्जली दी।

शोधकार्य के ही सिलसिले में मैं लीवरह्यूम विजिटिंग फेलोशिप पर आस्ट्रेलिया गया। मेरा मुख्य कार्यलय न्यू साउथ वेल्स विश्वविद्यालय सिडनी के रसायन विभाग में रहा। प्रो0 एस0इ0 लिविंग्स्टन की प्रयोगशाला में शोध कार्य करने का अवसर मिला। फेलोशिप के दौरान (जुलाई 1970- अक्टूबर 1970) मुझे आस्ट्रेलिया में सभी विश्वविद्यालयों में जाने का अवसर मिला। यह "फेलोशिप" पूरे एशिया महाद्वीप के लिए केवल एक थी। इसको पाकर मैने अपने को भाग्यशली माना। इन्सा-रॉयल सोसाइटी एक्सचेंज (1984) फेलो के रूप में मुझे इंग्लैण्ड के अनेक विश्वविद्यालयों में जाने का अवसर मिला। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में लार्ड लुइस के साथ विचार विनिमय से मैं काफी लाभान्वित हुआ। नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो0 विलकिन्सन से इम्पीरियल कालेज लन्दन में शोध की नई दिशाएं समझने का अवसर मिला।

सभी यात्राओं में शोध प्रस्तुतियों में प्रत्यक्ष या परेक्ष रूप से गुरुवर नाइहोम की छाया रही। एक घटना याद आती है, लन्दन के आई0सी0सी0सी0 सम्मेलन (1969) में इम्पीरियल केमिकल इन्डस्ट्रीज" की ओर से मिलबैंक हाउस, लन्दन में डेलीगेट्स "डिनर" के लिए निमंत्रित थे। मैं लिफ्ट के पास प्रतीक्षा में खड़ा था। वहीं प्रो0 जी0 विल्किन्सन, प्रो0 एफ0ए0 काटन तथा उन्ही के साथ मेरे मित्र डा0 एल0डी0 दवे, (डा0 दवे लन्दन में प्रो0 विलकिन्सन के शोध छात्र थे) आए। डा0 दवे ने प्रो0 काटन मेरा परिचय कराया "मिलिये डा0 निगम से।" काटन साहेब बोल पड़े क्या वही निगम जो नाइहोम के साथ काम करते हैं?" डा0 दवे के कुछ कहने के पहले प्रो0 विलकिन्सन अपने को रोक न पाये और उनके मुह से निकल गया" हाँ , पर ये उधर हैं! " विज्ञान में यह राजनीति बहुत सुखद नहीं प्रतीत हुई किन्तु हम सभी मानवीय कमजोरी के शिकार हैं।

वैज्ञानिक सम्मेलनों की कड़ी में विज्ञान नीति पर विचार विमर्श करने का अवसर मुझे मिचिगन (1972) में हुई "इन्टरनेशनल कान्फ्रंस फार कोआपरेशन इन साइंस" में मिला, सम्मेलन का सह-अध्यक्ष होने का सम्मान भी मिला। पंचवर्षीय मेन्डलीफ कांग्रेस (1981) वाकू रूस में हुई, जिसमें मैं "राज्य-अतिथि" के रूप में निमंत्रित हुआ और सोविएट रूस के रसायनज्ञों के सान्निध्य से लाभान्वित हुआ। मिचिगन सम्मेलन में विज्ञान में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की गोष्ठी में उभरे विचार मेरे मन में हमेशा उथल-पुथल मचाते रहे। अपने देश में प्रयोगशालाओं संसाधनों की कमी तो है ही, अब विज्ञान के प्रयोग हेतु आवश्यक उपकरण इतने महंगे हो गए हैं कि इंग्लैण्ड जैसे विकसित देश को भी "पूलिंग" की आवश्यकता पड़ रही है। हमारे जैसे विकासशील देश के लिए तो यह सहयोग प्रत्येक स्तर पर आवश्यक है। खेद है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं प्रयोगशालाओं में ही नहीं, एक ही विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों में भी हमारे यहाँ ऐसा सहयोग संभव नहीं हो पाया है। देश की वैज्ञानिक प्रगति में तीव्रता न आ पाने का यह एक विशेष कारण है। मैं अवश्य अपने शोध-छात्रों को "ट्रेनिंग" के लिए व अनुसंधानों में आधुनिक मायनों के लिए बाहर भेजता रहा। "टाटा इन्स्टीट्यूट आफ फन्डामेन्टल रिसर्च " में प्रो0 सी0आर0 कानेकर डा0 सी0एल0 खेत्रपाल व डा0 गिरजेश गोविल से बहुत हितकर सहयोग मिला। एन0सी0एल0 में डा0 ए0पी0बी0 सिन्हा

से बड़ी सहायता मिली। आई0आई0टी0 कानपुर के रसायन विभाग में प्रो0 यू0सी0 अग्रवाल, प्रो0 सी0एन0आर0 राव से बराबर सहायता मिली।"एक्स-रे अवशोषण वर्णक्रमिकी" के कार्य में भौतिक शास्त्र विभाग के प्रो0 विश्नोई तथा प्रो0 बी0के0 अग्रवाल (स्व0) से अप्रतिम सहयोग मिला।

मैं प्रयासरत रहा कि देश की वैज्ञानिक संस्थाओं की सेवा कर सकूँ।"नेशनल एकेढेमी आफ साइंसेज" की कार्यकारिणी सदस्य के रूप में, विदेश सचिव के रूप में तथा कोषाध्यक्ष के रूप में मुझे लम्बे समय तक कार्य करने का अवसर मिला। "एकेडेमी" से एक "नेशनल एकेडेमी साइंस लेटर्स" प्रकाशित करने की अपनी संकल्पना को मैं उसके प्रथम सम्पादक के रूप में साकार करने में सफल रहा। 1977 में मेरा निर्वाचन "इण्डियन नेशनल साइंस एकेडेमी (इन्सा)" के फेलो (अध्येता) के रूप में हुआ इन्सा की कार्यकारिणी की सदस्य के रूप में मैने देश के अकार्बनिक रायनज्ञों को उचित मान्यता दिलाने का प्रयास किया। फेलोशिप के लिए प्रो0 यू0सी0 अग्रवाल, प्रो0 अनिमेश चक्रवर्ती, प्रो0 जी0के0एन0 रेड्डी, प्रो0 एस0एस0 सन्धू, प्रो0 एम0एम0 तकी खाँ, प्रो0 श्री0 कृष्णन तथा प्रो0 एस0एस0 कटियार जैसे रसायनज्ञों के नाम के मेरे प्रस्ताव को "इन्सा कौंसिल" ने स्वीकार लिया।"इण्डियन साइंस कांग्रेस" सम्मेलन (1980 बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय) के रसायन खण्ड के अध्यक्ष के रूप, इण्डियन केमिकल सोसाइटी के अध्यक्ष (1990-91) के रूप में संस्थागत कार्यों को बढ़ाने का मेरा भरसक प्रयास रहा।"रॉयल सोसाइटी आफ कैमिस्ट्री" की 150 वी वर्षगाँठ पर विश्व की सभी राष्ट्रीय केमिकल सोसाइटी के अध्यक्षों के सम्मेलन (1991) में लन्दन में मुझे वैज्ञानिक संस्थाओं की नीति, विकास की गति आदि विषयों पर आयोजित गोष्ठी में भाग लेने का विशेष अवसर मिला।

देश में विज्ञान में मूल चिन्तन को प्रोत्साहित करने के लिए यह परमावश्यक है कि विज्ञान की शिक्षा राष्ट्रभाषा के माध्यम से हो। हिन्दी में विज्ञान लेखन की सबसे पुरानी संस्था विज्ञान परिषद से मेरा जुड़ना इसी कड़ी में है। उच्च से उच्च स्तर की पाठ्य पुस्तकें हिन्दी में लिखी जाएँ इस इस दिशा में मैने भी विनम्र प्रयास किया। मेरी पुस्तक "प्रकाश रसायन" स्नातकोत्तर स्तर के लिए हिन्दी माध्यम से लिखी गई पहली पुस्तक है। अब तो अनेक विषयों पर हिन्दी में श्रेष्ठ पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। चीन, जापान, कोरिया जैसे देशों में विज्ञान की भाषा उनकी राष्ट्र भाषा है। वह दिन कितना सुखद होगा जब भारत में राष्ट्र भाषा को विज्ञान शिक्षा का माध्यम पूर्णरूपेण अपनाया जाएगा।

प्रयाग विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने से पूर्व ही मैं दिसम्बर 1982 में अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा का कुलपति नियुक्त हुआ। जिस दिन विश्वविद्यालय के प्रांगण में मैने कुलपति के रूप में कदम रखा, मुझे विन्ध्य प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री स्व0 कप्तान अवधेश प्रताप सिंह का स्नेहाशीष स्मरण हो आया। अपने मुख्यमंत्रित्व काल में उन्होने मुझे रीवा बुलाकर कहा था "निगम जी मैं रीवा में एक विश्वविद्यालय की स्थापना करना चाहता हूँ। उसके कुलपति आप बनेंगे।" कप्तान साहब के जीवन काल में उनका स्वप्न साकार नहीं हो सका। जब उनके सुयोग्य पुत्र श्री गोविन्द नारायण सिंह जी मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री बने उन्होने अपने पिताश्री का संकल्प पूरा किया। रीवा में विश्वविद्यालय बना और मैं उस विश्वविद्यालय का कुलपति भी बना। अपने छः वर्ष (1982-1988) के कार्यकाल में मैं इस विश्वविद्यालय के लिए क्या-क्या कर सका इसका लेखा विश्वविद्यालय का परिसर बयान करता है। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि मेरे लिए वह विन्ध्य की माटी का और रीवा की धरती का कर्ज चुकाने का अवसर था। मैने भरपूर कोशिश की और अपनी उपलब्धियों पर मुझे गर्व है।

अवकाश प्राप्त करने के बाद हमने लखनऊ में अपना एक छोटा सा घर बना लिया है। पारिवारिक जीवन के सभी अनुभव सुखद रहे हैं। बड़ी पुत्री इला गृहिणी है, उसके पति मेरे बड़े जमाता श्री आशुतोष प्रसाद "इण्डियन रेवन्यू सर्विस" में हैं। छोटी पुत्री शिखा गृहणी होने के साथ स्वयं स्टेट बैंक आफ इण्डिया में अधिकारी है और उसके पति, मेरे छोटे जमाता श्री विशाल शरद ओहरी भी उसी बैंक में अधिकारी हैं। पुत्र आलोक आई0ए0एस0 है। नाती अटल और अविचल विश्वविद्यालय में हैं, नातिनी विजेता और पर्णिका स्कूल मेंहैं, पौत्री श्रेयसी व पौत्र सूर्यांश स्कूल में हैं। ये सब सुखी रहें, देश धर्म की सेवा करें, तो मुझे सन्तोष मिलेगा। मेरा शेष जीवन भी देश, समाज व विज्ञान की सेवा में गुजरे, यही परम पिता से प्रार्थना है।

प्रो. निगम इन्दिरा जी के साथ (नेशनल एकेडेमी ऑफ साइन्सेज़ की स्वर्ण जयंती के अवसर पर)

जब कानपुर विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.एस.सी. की मानद उपाधि से विभूषित किया।

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा के कुलपति के रूप में प्रो० निगम

विज्ञान परिषद प्रयाग में स्वामी सत्य प्रकाश स्मृति व्याख्यान देते हुए